आग़ामीर

[लखनऊ-नवाबी के जमाने का ऐतिहासिक उपन्यास]

लेखक

देवीप्रसाद धवन 'विकल'

[पाखंडी, उत्तराधिकार आदि पुस्तकों के प्रणेता]

मिलने का पता—

राष्ट्रीय प्रकाशन मंडल

मछुआ टोली, पटना—४

प्रकाशक

राष्ट्रीय साहित्य, सदन

१७, मिश्रबंधु, मार्ग

लखनऊ

प्रथम संस्करण

मूल्य २ रु० ७५ नए पैसे

2/75

मुद्रक

अवध प्रिंटिंग वर्क्स, लखनऊ

भूमिका

मित्रवर श्री देवीप्रसाद धवन हिंदी के मँजे हुए लेखक हैं। उनकी लेखनी में प्रवाह है, और वर्णन-शैली में ओज। उन्होंने अब तक बहुत से उपन्यास और कहानियाँ लिखकर काफ़ी यश कमाया है। बहुत खोज एवं शोध के पश्चात् लिखा गया प्रस्तुत उपन्यास 'आग़ामीर' लखनऊ के नवाबी-काल का चित्र-सा खींच देता है, और ऐतिहासिक होने के कारण, स्थायी महत्त्व रखता है।

'आग़ामीर' ऐतिहासिक व्यक्ति है, और उसके संबंध में तत्कालीन इतिहास-लेखकों ने काफ़ी लिखा है। उसकी प्रतिभा, समय को देखते हुए, अपूर्व थी। कदाचित् वह पहला व्यक्ति था, जिसने प्रजा के दृष्टिकोण को बादशाह के सामने निडरता और सफ़ाई से रक्खा, और बादशाह गाज़ीउद्दीन को अपनी तरफ़ मोड़ भी लिया। अँगरेज़ रेज़िडेंट की कार्रवाइयों पर निगाह रखना, वक़्त पर उनका भंडाफोड़ करना, और उसके कुचक्रों को निष्फल कर देना 'आग़ामीर' के ही दिमाग़ का काम था; वर्ना अवध की नवाबी ग़ाज़ीउद्दीन के ही काल में ख़त्म हो जाती, और वाजिदअली शाह का वजूद ही न होता। गंगा का जल, नहर बनाकर, लखनऊ लाने का प्रयास, और तमाम बाग़-बगीचे बनवाने का क्रम आग़ामीर के निर्माण-कार्य के प्रति यथेष्ट रुचि का द्योतक है, जो उस ज़माने में एक नवीन योजना थी।

प्रस्तुत उपन्यास की सभी घटनाएँ ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित हैं; केवल उपन्यास-रचना के नाते बहस-मुबाहसे, बात चीत और तर्ज़-तरीक़े लेखक ने अपनी ओर से जोड़े हैं—परंतु उस समय की

तहज़ीब को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक भी था। भाषा का प्रवाह उस लखनवी हिंदी की परिपाटी का पालन करता है, जिसे माधुरी-सुधा संपादक, श्रीदुलारेलाल भार्गव और स्व० रूपनारायणजी पाण्डेय ने सजाया-सँवारा, और जिसकी छाप आधुनिक हिंदी के गद्य पर विशेष रूप से पड़ी है। इस लखनवी हिंदी के अंतर्गत उर्दू के आम-फ़हम और प्रचलित शब्द, जो सदियों के इस्तेमाल से मँजे हुए हैं, अब हिंदी के स्वयं अपने हो गए हैं। हम इस शैली के समर्थक हैं। विशेषकर उपन्यास-रचना में, जिसमें पाठकों की रुचि का भी ध्यान रखना आवश्यक है। इस शैली में काफ़ी लोच और मिठास है। हाँ, हम हिंदी के उर्दूकरण के पक्षपाती नहीं हैं।

हमारे विचार से हिंदी को ऐसे ऐतिहासिक उपन्यासों की काफ़ी आवश्यकता है, जो समय-समय पर, समाज व देश की परिस्थितियों तथा हालतों पर प्रकाश डालते रहें, ताकि हमें सदैव अपनी कमज़ोरियों का आभास होता रहे। इस दृष्टि से भी 'आग़ामीर' उपन्यास काफ़ी सफल हुआ है। लेखक, कृपया, हमारी बधाई स्वीकार करें।

लखनऊ ज्योतिलाल भार्गव

१।१२।६२ (भूतपूर्व, डाइरेक्टर, नेशनल सेविंग्ज़ भारत-सरकार)

संपादक

कथा से पूर्व

ग्रीष्म काल में यह नाला निर्जीव-सा पड़ा रहता है, किंतु बरसात में उमड़-घुमड़कर जब वह आने-जानेवालों के कानों में अपने अस्तित्व की धाक जमाता रहता है, तब कदाचित् ही किसी का ध्यान उसके इतिहास की ओर जाता हो, जिसमें मानव-मस्तिष्क की योजनाओं की सफलता एवं विफलता निहित है। गर्मी के दिनों में वह मौन रहता है, किंतु बरसात में जलाधिक्य से जब वह अपनी सीमाएँ तोड़ देता है, तो लखनऊ में एक प्रलय का-सा दृश्य उपस्थित हो जाता है।

मूसलाधार पानी पड़ चुका था। ऊपर बादल गरज रहे थे और नाले की गर्जना आने-जानेवालों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर रही थी।

मैं पूछ बैठा, 'इतना शोर किसलिये ? अपनी सीमा में रहना सीख।'

गर्जना के शब्दों में नाले ने कहा–'तुम क्यों रुक गए ? अपना रास्ता पकड़ो। मुझसे तुम्हारा वास्ता ?'

मैंने कहा–'तेरी गर्जना में जो चीत्कार है, उसमें एक दर्द छिपा हुआ मालूम पड़ता है मुझे।'

मेरी खिल्ली-सी उड़ाते हुए नाले ने कहा–'ओह ! मानव-स्वभाव में यह अभूतपूर्व परिवर्तन ? तुमने ऐसा हृदय कहाँ पाया पथिक ?'

मैं गंभीर होकर बोला—मानव स्रष्टा है। प्रकृति से उसकी होड़ चला करती है।'

अट्टहास के स्वर में नाला बोला–'मानव और प्रकृति से होड़ ? यह भी खूब रही।'

मैं स्फुट स्वर में बोला 'अरे मूर्ख, प्रकृति के निर्माण अधूरे और कहीं-कहीं निरर्थक भी हैं। इसके विपरीत मानव ने सदा पूर्णत्व और सार्थकता को जन्म दिया है। तेरा निज का अस्तित्व भी तो उसी प्रकृति की निर्माण-बुद्धि का एक उपहास-मात्र ही तो है।'

हँसकर नाले ने कहा 'मानव-शक्ति की सार्थकता की दुहाई देने-वाले अनजान पथिक; तू भ्रम में है। मेरा अस्तित्व मानव-मस्तिष्क की योजनाओं का ही एक अधूरा प्रयास है। प्रकृति से मेरा कोई संबंध नहीं।'

आश्चर्य की मुद्रा में मैं पूछ बैठा–'यह कैसे ?'

नाला बोल उठा, 'स्वयं मेरा इतिहास ही इसका साक्षी है। लखनऊ के नवाब गाज़ीउद्दीन हैदर को खूबसूरत इमारतें बनवाने का बड़ा शौक था......'

[१]

हम जिस समय की बात कह रहे हैं, तब न तो पूँजीपतियों और श्रमजीवियों में किसी प्रकार का संघर्ष ही था और न शोषण को बुरा बतलानेवाले किसी महापुरुष का जन्म ही हुआ था। हम उस समय की बात कह रहे हैं, जब शासक को ईश्वर का अवतार मानकर जनता स्वतः उसके चरणों पर अपना सब कुछ निछावर करके अपने को धन्य समझ लेती थी। राष्ट्र के बड़े-बड़े प्रासादों को राष्ट्र की संपत्ति न मानकर केवल शासक की रुचि का परिचायक ही समझा जाता था। अकाल, अति वर्षा तथा महा रोगों के समय यदि राजा प्रजा के लिये कुछ कर देता, तो उसे सार्वजनिक रूप से राजा का आभार ही माना जाता था। इस प्रकार के आभारों की कहानियाँ युग-युग तक गाई जाती थीं। लखनऊ में अकाल के समय आसफी इमामबाड़ा ऊँची श्रेणी के स्त्री-पुरुषों से बनवा-कर जो उन्हें पाव-पाव भर अन्न प्राण-रक्षा के लिये बाँटा गया; इसी से नवाब आसफुद्दौला सदा के लिये अवध के इतिहास में अमर हो गए तथा उन्हें खुदा से भी ऊँची पदवी दे दी गई। लखनऊ में चिरकाल तक लोग 'जिसको न दे मौला, उसको दे आसफुद्दौला' की कहावत कह कर नवाब साहब पर आशीर्वाद की वर्षा करते रहे।

हम उसी युग की बात कह रहे हैं, जिसमें शासकों द्वारा आज की अपेक्षा हज़ार गुना शोषण होने पर भी उसे बतलाने का किसी में साहस न था। इसे कभी शोषण माना भी नहीं गया। शासकों की विलासिता के लिये राज्य-कोष खुला रहता था, किंतु इसके विरुद्ध जबान खोलने का भी साहस किसी में न था। लखनऊ की नवाबी के किस्से आज भी बड़े चाव के साथ पढ़े और सुने जाते हैं। सबसे विचित्र बात तो यह है कि इतिहास भी वही कहता है, जो उस समय के नवाब कहना चाहते थे। उसमें शासकों के ही वैभव, सुख और संपत्ति की चर्चा की गई है। जनता की रुचि, कष्ट तथा जीवन मरण की कहानी कहने वाला न तो उस समय कोई था और न आज किसी इतिहासकार को उसमें किसी भी प्रकार की दिलचस्पी ही है। किंतु—

कथाकार की लेखनी किसी को भी क्षमा नहीं कर सकती। वह तो चलेगी ही, बिना किसी आधार के भी। वह देख नहीं सकता, किंतु कल्पना तो कर सकता है।

हाँ, तो हमारी कहानी प्रारंभ हो जाती है। ऐतिहासिक प्रमाण भी हम दे सकते हैं किंतु हम उसकी कोई आवश्यकता नहीं समझते। पाठक इसे चाहे कोरी कल्पना समझ लें या इतिहास की बात। हाँ, तो फिर—

लखनऊ की सड़कें आग उगल रही हैं। हवेलियाँ भाड़-सी तप रही हैं और साधारण से मकान और झोपड़े भी। लू की लपटें रह-रह कर भीतर के परिवारों को प्रचंड उष्णता का यदा-कदा परिचय दे जाती हैं। गोमती का पानी उबल-उबलकर गहरी निश्वासें छोड़ रहा है परन्तु—

शासकों, श्रीमानों तथा पूँजीपतियों की अट्टालिकाओं के निर्माण में किसी प्रकार की बाधा नहीं आ रही है मज़दूर का शरीर इस प्रचंड अग्नि-वर्षा में भी अपनी कन्नी खटखटाकर आज की भाँति ही बतला रहा है कि वह मानव-गणना की सूची में कभी नहीं रक्खा गया। शरीर

को झुलसाकर, ठिठुरकर अथवा वर्षा में अपने को डुबाकर विश्व-सभ्यता की वृद्धि के लिये निर्माण करते रहना तथा मुट्ठी भर विलासी पुरुषों के पनपनेवाली खाद में रक्त देते रहना उसने सदा से ही अपना कर्तव्य माना है।

तो हाँ, धूप से उसका शरीर जल रहा है, सड़े पसीने में उसका शरीर डूब रहा है, किंतु उसके हाथ चल रहे हैं। इस असहनीय गर्मी में भी उसके हाथ लखनऊ का इतिहास बना रहे हैं—वह इतिहास जिसमें उसका नाम भी न लिखा जायगा, उसका श्रम भी न याद किया जायगा। ऐसा क्यों ? क्योंकि वह अपना पेट भरने के लिये नित्य सांझ होते ही कुछ पैसे या मुट्ठी भर अन्न के दाने पा जाता है। जिसके पैसे उसका नाम। लखनऊ को भव्य, आकर्षक तथा सुंदर इमारतों से किसने वर्तमान रूप दिया। इतिहास बतला देगा कि शासकों ने—नवाबों ने। नहीं तो फिर किसने ? उन नवाबों ने जो इन इमारतों के निर्माण के समय गर्मी में खस के सुवासित पर्दों के पीछे सुख से सोते रहते थे तथा जाड़ों में नरम दुलाइयों में दुबक कर सब प्रकार का ऐश्वर्य भोगते थे ? किंतु वे हाथ जो गर्मी में झुलस कर उनका निर्माण करते थे, सर्दी में ठिठुर कर भी अविराम अपनी कन्नी चलाते रहते तथा वर्षा में भीग कर भी दीवारों पर चूना घोटते रहते थे, इतिहास में कहीं ढूंढे न मिलेंगे। और क्यों मिलें ? क्योंकि संध्या को अपना पेट भरने के लिये वे कुछ पैसे जो पा जाते थे।

यों तो आजकल न जाने क्यों लखनऊ के बाजारों में कुछ उदासी—कुछ सन्नाटा-सा छाया रहता है। फिर भीषण गर्मी और उस पर दोपहर का समय। बाजार में ग्राहकों का अभाव है। सजी हुई फलों की दुकानों पर कोई खरीदार नहीं। तम्बाकू की दूकानें खमीरे से गमक रहीं हैं, लेकिन खरीदार वहां भी नहीं।

इस तेज लू-लपट में एक नवयुवक धीरे-धीरे बाजार की ओर

चला आ रहा है। वह किसी चिंता में खोया हुआ-सा है। उसका शरीर दुबला पतला तथा वस्त्र अति साधारण से हैं। लू के मारे अंगारा-सा लाल हो जाने पर भी उसके चेहरे पर विद्वानों का-सा तेज है। साधारण होते हुये भी वह कुछ आसाधारण-सा मालूम पड़ रहा है।

सड़क के एक किनारे बटेरों की लड़ाई हो रही थी। उसे एक छोटी सी भीड़ खड़ी होकर देख रही थी। नवयुवक थोड़ी देर तक लखनऊ के इस प्रिय दृश्य को देखता रहा। दो मिनट में ही वह मुँह बना कर आगे बढ़ गया।

फल-वाला ऊंघ रहा था। नवयुवक ने, आहट से, उसकी निद्रा भंग करते हुए कहा 'अम्याँ ककड़ियाँ क्या भाव दीं ?'

फलवाला ढ़ेर से ककड़ियाँ छाँटते हुये बोला 'ले लीजिए हुजूर ! कितनी दे दूँ ?'

नवयुवक ने कहा—'चार ककड़ियाँ छांट कर दो। दाम वाजिबी ही लेना, भाई।'

फलवाला बोला—'अब हुजूर से क्या दाम बतलाना है। पैसे- दो पैसे दे दीजियेगा।'

नवयुवक ने पैसे दे दिये तथा ककड़ी खाता हुआ बोला—'बड़ा सन्नाटा है बाज़ार में ?'

फलवाला बोला—'लखनऊ की रौनक तो इन फिरंगियों ने मार दी। दिन-दहाड़े लूट मचा रक्खी है। माल खरीदते हैं तो दाम नहीं देते। अब सरेशाम से ही लखनऊ के बाज़ार बंद हो जाते हैं। कहीं सुनवाई नहीं। लखनऊ का तो अब खुदा ही हाफ़िज है।'

नवयुवक गंभीर चेहरे से आगे बढ़ गया। तंबाकू वाले की दूकान पर दो-चार यार-दोस्त गप लड़ा रहे थे। नवयुवक वहीं खड़ा होकर हुक्के से कश खींचने लगा।

एक व्यक्ति कह रहा था—'अजब सन्नाटा है। बिकरी-बट्टे के नाम पर तो अब दो हुरूफ रह गए हैं।'

दूसरा सेठ बोल उठा, 'बिकरी-बट्टा क्या हो, फिरंगियों ने तो लूट मचा दी है। नवाब साहब अपनी ऐयाशियों में मस्त रहते हैं। सुना है, गोमती के किनारे एक मीना बाजार खुलनेवाला है।'

तीसरा बोला—'यह भी तो सुना है कि अब लखनऊ के आम-खरबूजे विलायत जाया करेंगे। लखनऊ का तो अब अल्लाह ही मालिक है।'

नवयुवक एक निश्वास लेकर आगे बढ़ गया।

अब हम एक राजकीय अट्टालिका के निकट पहुँच रहे हैं, जिसके निर्माण में नित्य संध्या को पैसे पाने वाले हाथ अविराम चल रहे हैं। लखनऊ के वर्तमान नवाब गाज़ीउद्दीन हैदर को नित नये राजभवन बनवाने का शौक है। सैकड़ों मज़दूरों के शरीर और मस्तिष्क इस राजप्रासाद को खड़ा कर रहे हैं। किंतु प्रजा के लिये इन राजप्रासादों का उपयोग सदा वर्जित रहेगा। प्रजा से प्राप्त धन प्रजा पर व्यय करने के लिये नवाब साहब बाध्य नहीं हैं।

वह नवयुवक धीरे-धीरे इसी प्रासाद की ओर जा रहा है। वह किसी चिंता में खोया हुआ है।

प्रासाद के निकट पहुँचकर वह रुका। उसकी दृष्टि ऊपर के खंड से जाकर अटक-सी गई। 'या अल्लाह!' कहकर वह निकट ही पड़े हुए एक पत्थर पर बैठ गया।

मज़दूरों का काम चल रहा था। सिर पर गारे का तसला लेकर ऊपर जाते हुए एक मज़दूर से वह पूछ बैठा—'क्या फिर कोई महल बनने लगा-नवाब साहब का?'

मज़दूर ने बड़े ध्यान से उसकी ओर देखा और कहा—'जी हाँ। हज़रत का नया महल तैयार कर रहे हैं हम लोग।'

नवयुवक ने सिर हिलाया और एक निःश्वास छोड़ते हुए कहा—'फिर नया महल? यह भी खूब रही?'

मज़दूर ने नवयुवक पर आंखें गड़ाकर कहा—'पागल हो गये हो क्या ?'

नवयुवक थोड़ा मुस्किराया और बोला 'मैं पागल हो गया हूँ या तुम लोग, जो इतनी कड़ी धूप में भी अपने वदन को झुलसा कर काम कर रहे हो।'

कहकर वह हँसा और तुरंत गंभीर हो गया।

मज़दूर परख गया कि नवयुवक अवश्य ही पागल है। वह उसकी ओर गंभीर भाव से देखता हुआ ऊपर चला गया। युवक बैठा रहा।

थोड़ी ही देर में उसके आस-पास बहुत से मज़दूर आकर एकत्र हो गए।

एक ने कहा 'लखनऊ में ही रहते हो ?'

नवयुवक बोला—जी हाँ। वंदा इसी लखनऊ का ही बाशिंदा है।'

दूसरा पूछ बैठा 'क्या काम करते हो ?'

नवयुवक मानो मन ही मन इन प्रश्नों का आनंद ले रहा था। बोला 'आजकल तो महकमा वेकारी में हूँ।'

और वह फिर हँस दिया।

अब मज़दूरों का नायक भी काम छोड़कर वहाँ आ गया था। कुछ विगड़कर मज़दूरों से बोला—'क्या जमाव लगा रक्खा है ? अपना अपना काम क्यों नहीं करते जाकर जी ?'

एक ने धीरे से कहा—'यह पागल यहाँ आकर बैठ गया है। न जाने क्या कर बैठे ? इसे खिसकाइए यहाँ से।'

नायक धीरे से युवक के पास जाकर बोला—'क्यों जी, क्या बात है ? कैसे बैठे हो यहाँ ?'

नवयुवक गंभीर वाणी में बोला—'तुम अपना काम करो जाकर। तुमसे क्या मतलव कि मैं क्यों यहाँ बैठा हुआ हूँ ?'

नायक किंचित् अकड़ कर बोला—'मतलब क्यों नहीं है जी ! चलो उठो, अपना रास्ता पकड़ो । बेकार में आकर यहाँ का काम बंद करवा दिया ।'

नवयुवक तनिक भी उत्तेजित नहीं हुआ । धीरे से बोला—'काम तो बिल्कुल ही तुम लोगों को बन्द कर देना चाहिए था । यह मौसम भी क्या काम करने का है ? क्यों बेकार अपनी जानें दे रहे हो ?'

नायक नवयुवक को पागल समझकर मुस्कुराया । बोला, 'तो क्या खाने को आप दे देंगें जनाब ! और फिर आपको शायद नहीं मालूम कि यह महल मालिके अवध का बन रहा है । इस तरह की बातें करने की जुरअत ही आपको कैसे हुई ?'

नवयुवक खिलखिलाकर हँस पड़ा । बोला 'आप भी खूब हैं जनाब ! कोई किसी को क्या दे सकता है ? नवाब साहब के पास पैसा कहाँ से आया ? हमारा-तुम्हारा ही पैसा लेकर तो वे राज़ महल पर महल बनवाते चले जा रहे हैं । मैं पूछता हूँ कि बिना ज़रूरत के वह नया महल क्यों बनवा रहे हैं ?'

नायक बिगड़ कर बोला—'महल न बनवायें, तो क्या फिर आपका घर बनवायें ?'

नवयुवक बोल 'बेशक । नवाब साहब के पास न जाने कितने महल हैं, फिर यह महल बेकार ही तो बन रहा है ? यह तो सरासर रुपया बरबाद करना हुआ । मैं पूछता हूँ कि लखनऊ में क्या ऐसे लोग नहीं हैं, जिनके पास एक झोपड़ी भी रहने को नहीं है ? क्या इस रुपए से उनके रहने के लिये छोटे-छोटे सैंकड़ों घर नहीं बन सकते ? नवाब साहब की यह सरासर ज्यादती नहीं तो क्या है ?'

एक मामूली आदमी मालिके अवध की शान में ऐसी बात कहे इससे बड़ी गुस्ताखी और क्या हो सकती है ? इससे बड़ा जुर्म और क्या हो सकता है ?

वह कड़क कर बोला—'चुप रहो जी ! तुम अदना से आदमी.... ।'

युवक मुस्करा कर बोल उठा, 'अदना ही सही लेकिन आदमी तो हूँ । आदमी आदमी सब बराबर हैं । नवाब साहब में क्या ख़ूबी है कि वे अपने लिये महल पर महल बनाते चले जायें और हमारे पास एक झोपड़ी भी न हो रहने के लिये । क्या यही इंसाफ है ?'

सब मज़दूर एक दूसरे के मुँह की ओर देखने लगे । एक ने धीरे से कहा, 'बना हुआ मालूम पड़ता है । मेरी समझ में तो कोई उठाईगीर है ।'

दूसरा बोला, 'कोई भेदिया है भेदिया ।'

तीसरा बोला, 'इसे पकड़ कर हज़रत के सामने पेश कर देना चाहिये '

नायक अब तक चुप था । बोला, 'अब तुमने ज़रा भी हज़रत की शान के खिलाफ कुछ कहा तो अच्छा न होगा । जाओ, अपना रास्ता पकड़ो ।'

नवयुवक कहने लगा, 'मैंने किसी भी तरह का कोई जुर्म नहीं किया है । सब बात कहने में ख़ुदा से भी डरना चाहिये । मैं सच ही कह रहा हूँ कि नवाब साहब को इस महल की जगह कोई ऐसी इमारत बनवाना चाहिये थी, जिससे रैयत का भला होता । ठीक कह रहा हूँ न ?'

नायक भौंहें चढ़ा कर बोला, 'लेकिन आप क्या किसी के ठेकेदार हैं जो हिमायत लेकर आए हैं । अभी नवाब साहब के सामने पेश कर दूँगा तो मुँह से आवाज़ न निकलेगी । तुम जानते हो ऐसी बातें करने वाले को क्या सज़ा मिलती है ? उसे सज़ाए मौत दी जाती है ।'

नवयुवक कुछ गंभीर होकर हँसा 'फिर बोला—'मैं तो जो कुछ कह रहा था 'ठीक ही कह रहा था । अगर तुम्हारी मर्ज़ी मुझे नवाब साहब के पास ही ले चलने की है, तो चलो मैं चलने के लिये तैयार हूँ ।'

मज़दूर एक दूसरे का मुँह देखने लगे। वह कहता गया, 'मैं जो कुछ यहां कह रहा हूँ वही वहाँ चल कर भी कहूँगा। चलो, शायद वहाँ कहने से कुछ मतलव की बात निकल आये। मैंने सुना है कि मालिके अवध समझदार आदमी हैं।

नवयुवक जिस आसानी के साथ नवाव साहब का नाम लेकर बात कर रहा था, उसे सुनकर मज़दूर आश्चर्य में भर गए थे। नवाव साहब के सामने जाकर बात करना अपनी जान हथेली पर रखने के समान था। उस पर रहम खाते हुये नायक ने कहा, 'हम तुम पर रहम खाते हैं। तुम शायद मालिके अवध को जानते नहीं? ज़िन्दा शायद ही लौट सको। जाओ, अपना रास्ता पकड़ो।'

नवयुवक फौरन वोल उठा, 'मैं जो कह रहा हूँ वही कहता रहूँगा तुम लोग शायद नवाव साहब को जितना वुरा समझ रहे हो, वह शायद इतने न भी हों। चलो, अव तो मैं उनके पास जरूर चलूँगा। एक न एक दिन तो उनसे मिल कर सव कुछ कहना ही पड़ेगा।'

और वह उठकर चलने को तैयार हो गया। मज़दूर उसकी निर्भीकता देख कर घवराए। नवयुवक बोला—"तुम लोगों के डरने की क्या बात है? मैं तो खुद उनसे मिलना चाहता हूँ।'

परस्पर कानाफूसी होने लगी। कोई भी उसे नवाब साहब के पास ले जाने के लिये तैयार न हो रहा था। नवयुवक कहने लगा, 'नवाब साहब को ऐसा कोई हक़ नहीं कि वह रैयत का रुपया इस तरह अपने ऊपर खर्च करें। उन्हें एक दिन इसका जवाब देना पड़ेगा।'

नायक समझ गया कि मौत इसके सिर पर खेल रही है। यह भी हो सकता है कि यह कोई भेदिया हो। इसे हुज़ूर के पास न पहुँचाने पर भी तो कड़ी सज़ा मिल सकती है।

अंत में नवयुवक को वंदी वना कर उसे राज कर्मचारियों के पास पहुँचा दिया गया।

युवती ने बारीक तथा कड़कती हुई आवाज़ में पूछा—'आप मुझे कहाँ ले जाना चाहते हैं अब्बाजान ?'

कासिम एक कुटिल मुस्कान के साथ बोला—'तेरी किस्मत खुल गई है, रशीदा ! मालिके अवध तुझे अपनी बेगम बनाना चाहते हैं। चल, उठ।'

रशीदा स्फुटस्वर में बोली—'मुझे अपनी बेगम बनाना चाहते या मेरी जवानी के साथ खिलवाड़ करना चाहते हैं ? साफ़ साफ बतलाइए न अब्बाजान ?'

क़ासिम ज़रा बिगड़ कर बोला, 'मुझसे जबान मत लड़ा रशीदा ! मैं जो कुछ कर रहा हूँ वह सिर्फ तेरी बेहतरी के लिये ही।'

रशीदा डरी नहीं। वह तड़पकर बोली—'मेरी बेहतरी के लिये या अपने चंद चाँदी के टुकड़ों को सीधा करने के लिये ? आपको शर्म नहीं आती अब्बाजान ?'

क़ासिम कच्चा खिलाड़ी न था। वह न जाने कितनी ऐसी लड़कियों को नवाब साहब के पास भिजवा कर इनाम पा चुका था। बोला, 'मैं तेरी कमअक्ली की दाद देता हूँ, रशीदा ! तू समझदार होकर भी नासमझी की बातें करती है। नवाब साहब तुझ पर बुरी तरह रीझ गए हैं। तुझे उनकी कदमबोसी के लिये जाना ही पड़ेगा। बेकार वक्त बर-बाद करने से कोई फायदा न होगा।'

रशीदा अपने बाप को खूब समझती थी। वह जानती थी कि नवाब साहब के हाथ न जाने कितनी भोली-भाली लड़कियों की अस्मत वह चाँदी के टुकड़ों के लिये बेचता रहता है। उसका यही तो पेशा है। वह चुप बैठी रही।

कासिम कहता गया, 'मेरा भी ज़माना पलट जायगा और तेरा भी।

मालिके अवध के पास रह कर मेरी भी इज्जत-अफजाई होगी और तेरी भी। इस वक्त तू जो चाहे सो बन सकती है।'

रशीदा क्रोध से ओंठ काट कर चुप रही। वह जानती थी कि अगर वह ज़िद करेगी तो नवाब साहब के गुमाश्ते उसे ज़बरदस्ती पकड़ ले जायेंगे।

उसे चुप देखकर कासिम ने समझ लिया कि वह राज़ी है। हंसता हुआ बोला—'तेरी इस समझदारी पर मुझे फख्र है। अच्छा, तो फिर तैयार रहना। आज शाम को तुझे नवाब साहब के महल में पहुँचा दिया जायगा।'

रशीदा मौन बैठी रही। कासिम प्रसन्न होकर चला गया।

उसके जाते ही रशीदा ने सिर उठाया। वह बड़बड़ाई, 'बेशर्म! लड़की की अस्मत बेचते हुए भी माथे पर शिकन तक न आई। ज़लील कहीं का!'

रशीदा अनन्य सुंदरी है वह कीचड़ में कमल के समान है। वह किसी भी उच्च परिवार की शोभा बढ़ा सकती है। सतीत्व को वह स्त्री का परम पवित्र धन समझती है। वह नरक-तुल्य घर में भी रहकर अपने को नीचा नहीं गिरा पाती। वह अपने पिता के घृणित व्यापार के संबंध में भी बहुत दिनों से सब-कुछ जानती है। किंतु उसने कभी यह कल्पना भी न की थी कि वह एक दिन अपनी बेटी को भी बेच सकता है। आज सवेरे-सवेरे पिता के इस प्रस्ताव को सुन कर वह स्तब्ध रह गई थी। वह पतित तो सदा का ही है, किंतु यहां तक गिर जायगा इसकी उसने कल्पना भी न की थी। पिता का विरोध करने की शक्ति वह अपने में नही पाती। वह जानती है कि पिता के पीछे शासन की शक्ति है। वह किसी प्रकार भी अपना बचाव न कर पाएगी। तब—तब वह क्या करे?

उसका हृदय बैठा जा रहा है। उसे पिता की इच्छाओं पर चल-कर नवाब साहब की वासनाओं पर अपनी बलि चढ़ानी ही पड़ेगी।

आज उसकी रक्षा कौन कर सकता है ? संसार में कोई भी तो उसको बचाने की शक्ति नहीं रखता। जब रक्षक ही भक्षक हो, तो फिर कौन रक्षा कर सकता है। इस अन्याय का तब क्या कोई प्रतिकार नहीं ? इस अत्याचार के विरुद्ध क्या कोई आवाज नहीं ? क्या इतिहास कभी बतला सकेगा कि ऊपर से चिकने-चुपड़े, उदार तथा कला में सिर से पैर तक डूबे हुए लखनऊ के नवाव इस प्रकार अपनी ही बहू-वेटियों की अस्मत पर डाका डाला करते थे ?

रशीदा के विवशता के आंसू ढुलक पड़े। उसकी इच्छा हुई कि वह गले में फाँसी लगाकर अपने प्राण दे दे। किंतु—

वह सोचने लगी 'यह बुज़दिली है। अगर जान देना ही है, तो कुछ करके ही देना चाहिए। वह स्वयं क्या इन अत्याचारों का प्रतिकार नहीं ले सकती। वह क्या अन्याय का सक्रिय विरोध नहीं कर सकती ? जान की ही तो वाजी लगाना पड़ेगी ? और वह जब जान देने के लिये तैयार ही है, तो फिर वह क्या नहीं कर सकती ? जान जाने का केवल प्रकार ही तो बदलना पड़ेगा। लेकिन यह जलील बाप——

रशीदा क्रोध में मुट्ठियां बाँध कर ओंठ काटने लगी। वह अंदर हीं अंदर तड़प उठी उसका मन विद्रोह की ज्वाला से जलने लगा।

संध्या को कासिम ने आकर कहा, 'तू तैयार है न रशीदा ?'

रशीदा ओठों पर बरबस मुस्कान लाती हुई बोली, 'मैं हर वक्त तैयार हूँ।'

प्रसन्न होकर कासिम बोला—मेरी अच्छी वेटी। तू बड़ी अच्छी है। रशीदा।'

घर के अंदर कासिम अपनी बीवी से कह रहा था—'अब हम तुम मजे करेंगे। तू क्या समझती है ? मेरी रशीदा वेगमों की तरह रहेगी—वेगमों की तरह।'

नखरे से मुँह मटकाती एक कम पचास साल की रशीदा की माँ

बोली–देखो जी ! अबकी मरतबा सारा रुपया लूँगी। तुम्हारे हाथ में तो पैसा टिकता ही नहीं है।

हंसता हुआ कासिम बोला, 'तो तुम्ही ले लेना रशीदा की माँ ! मुझको तो अपनी अफीम और गांजे की पुड़िया से मतलब है। अरे घबड़ाती क्यों है ? रशीदा माल लाएगी माल। तुमने समझ क्या रक्खा है ?'

कासिम मस्ती में झूमने लगा। ठोढ़ी पर अदा के साथ उंगुली रखती–हुई बुढ़िया ने कहा, 'ओख्-हो, किसी के धोखे भी मत रहना। रशीदा मेरी बेटी है मेरी। वह सब कुछ लाकर मुझे ही देगी। तुम मुंह धो रखना।'

कासिम हंसने लगा। फिर गंभीर होकर बोला, 'नवाब साहब के महल में रशीदा के टक्कर की एक भी औरत न निकलेगी। चाँद को मात करती है मेरी बेटी।'

बुढ़िया बोली, 'अजी हमारी रशीदा लाखों में एक है। नवाब साहब देखते ही सौ जान से फिदा हो जायेंगे।'

कासिम बोला, 'हमारी रशीदा के हुस्न के क्या कहने ? किसी परी से कम थोड़ा ही है। क्या उम्र होगी ?'

बुढ़िया आंखें मटका कर बोली, 'अभी उसकी उम्र ही क्या है ? जवानी का बस उभार शुरू ही हुआ है।'

कासिम मजे में आकर बोला, 'सच कह दूँ ? रशीदा तुम्हारी बेटी नहीं मालूम पड़ती।'

और वह हँसने लगा। कुछ बिगड़ कर बुढ़िया बोली, 'लड़की तो मेरी ही है, शायद तुम्हारी न हो।'

कासिम मुस्किराकर बोला, 'यह भी हो सकता है। यह बात तो तुम्हीं को ज्यादा मालूम होगी।'

अपनी गलती का एहसास करते हुए बुढ़िया ने कहा—चलो हटो ! तुम बड़े वो हो जी।'

[३]

अवध के शासकों में नवाब गाज़ीउद्दीन हैदर अपनी बहुत-सी विशेषताओं के लिये इतिहास में प्रसिद्ध हैं। कहते हैं-उन्हें नई-नई इमारतें बनवाने का बड़ा शौक था। वह लखनऊ को भव्य, आकर्षक तथा सुन्दर इमारतों से सजा देना चाहते थे। साथ ही साथ उनकी विलासिता की भी अगणित कहानियां हैं, किन्तु यह सारा पाप परदे के अंदर होता था। नवाव साहब को अपने इन दोनों शौकों को पूरा करने के वास्ते सदैव धन एकत्र करने की चिन्ता रहती थी। ऐसे तो अवध के शासकों का खजाना सदा ही भरपूर रहता था किंतु गाजीउद्दीन हैदर को अपनी इन विशेष इच्छाओं की पूर्ति के लिये अधिक धन की आवश्यकता रहती थी।

लखनऊ की भूमि सदा से उर्वरा रहती है। वह सदा सोना उगलती आई है, किंतु इस उपज को प्रगति की ओर ले जाने का राज्य की ओर से कोई विशेष प्रवंध न था। नवाब सदा से ही संपन्न शासक रहे। यदि वे चाहते तो राज्य की आशातीत उन्नति कर सकते थे, किंतु उनका ध्यान सदा विलासिता की ओर ही रहा है।

हम जिस रात की बात कह रहे हैं, उस समय प्रजा के ज़बान न थी। शासक की उचित-अनुचित किसी भी बात को न कभी बुरा ही माना जाता था और न उसकी कभी आलोचना ही होती थी। इसके अतिरिक्त नवाव के सभा-सदों तथा मंत्रियों को भी नवाब साहब की हां में हां मिलाने की ही अधिक चिन्ता रहती थी। उन्हें सलाह देने वाला कोई न था। दिन भर विलासिता के प्रकारों का ही अनुसंधान करना तथा उन्हें सुन्दर रूप से नवाब साहब के आगे प्रस्तुत करने से ही उनकी कुशाग्र बुद्धियों का सदुपयोग होता था।

जड़ाऊ कुरसी पर नवाव साहब बैठे हुए धीरे-धीरे सोने की मुंहनाल से कश खींच रहे हैं। पास ही छोटी-छोटी चार कुरसियों पर उनके मंत्रीगण बैठे हुए हैं। तभी उस गंभीर वातावरण को भंग करते हुए एक सभासद ने कहा, 'मालिकेजहां को इतनी फिक्र किसलिये है? नाचीज इस काम को वड़ी आसानी से अंजाम दे सकता है। हजरत का सिर्फ हुक्म भर होना चाहिए।'

दूसरे सभासद ने कहा—'मेरी राय में तो मालिके अवध को फिरंगियों से डरने की कोई जरूरत नहीं। थोड़ी सी रकम सर्फ कर देने से ही इनसे हर काम आसानी से कराया जा सकता है।'

सिर हिलाते हुए नवाब साहब ने कहा—'वेशक। तुम ठीक कह रहे हो दर्शनसिंह। सौदागरों को तो सिर्फ रुपए की ख्वाहिश रहती है। मगर इन दिनों जरा रुपया भी तो ..'

कहते-कहते नवाब साहब चुप हो गए।

दर्शनसिंह फौरन बोल उठे—'आप फिकर न करें मालिकेजहां। मैं सब इंतजाम कर लूंगा। आपका हुक्म चाहिए बस।'

कुछ प्रसन्न होकर नवाव साहब बोले—'तुम बहुत ही होशियार और वफादार दोस्त हो मेरे दर्शनसिंह! मगर इन फिरंगियों का कोई इतमीनान नहीं। रुपया पैदा करने के साथ-ही-साथ ये मेरी रियाया को भी तंग करने और भड़काने से बाज़ नहीं आते। 'सुना है कल कोई इस तरह का एक भेदिया गिरफ्तार भी किया गया है।'

आश्चर्य-सा प्रकट करते हुए दर्शनसिंह ने एक दूसरे सभासद की ओर देखा और कहा— 'क्या यह सच है, मंसूर साहब? क्या कोई भेदिया पकड़ा गया है?'

स्वीकारात्मक ढंग से सिर हिलाते हुए मंसूरअली ने कहा,—'पकड़ा तो गया है। पता नहीं, वह कर क्या रहा था?'

नवाव साहव की ओर देखते हुए दर्शनसिंह ने कहा—'उसका तो

फौरन सिर उतार लेना चाहिए, जिससे और लोगों को भी सबक हो।'

मंसूरअली ने कहा—'मेरी गुज़ारिश है कि मालिकेजहाँ उस शख्स से खुद बात करके देखें कि वह कहता क्या है? अंदरूनी बात को भी तो समझना है। मेरे ख़याल से वह फिरंगियों का भेदिया नहीं हो सकता।'

नवाब साहब ने सिर हिलाते हुए कहा—'तुम ठीक-कह रहे हो, मंसूर अली! मैं जरूर उससे बात करूँगा और उसको ऐसी सज़ा दूँगा कि हमेशा के लिये एक मिसाल बन जाय। तुम उसे अभी मेरे रूबरू पेश करो। हम उससे बात करना चाहते हैं।'

लहमें भर रुककर मंसूरअली ने कहा—'गुस्ताखी मुआफ़ हो मालिकेजहाँ, उस शख्स से अगर हुजूर अकेले ही में बात करें, तो ज्यादा अच्छा हो।'

कुछ सोचकर नवाब साहब ने कहा—'आप ठीक कह रहे हैं, मंसूर साहब! मैं उससे अकेले ही में बात करूँगा। दर्शनसिंह! तुम कोतवाल को मेरा हुक्म सुनाओ कि वह शाम को उसे मेरे रूबरू पेश करें। और साथ में वह मज़दूरों का सरगना भी गवाह की शक्ल में हाजिर रहे।'

दर्शनसिंह ने सिर झुकाकर कहा—'जो हुक्म सरकार का।'

नवाब साहब बोले—'ये फिरंगी हर बात में टाँग अड़ाने की कोशिश करते हैं। अब यह बात बरदाश्त के बाहर होती जा रही है।'

मंसूरअली ने कहा—'हुकूमत की बुराइयाँ ढूँढ़-ढूँढ़कर निकालना इनका काम हो गया है। मालिकेजहाँ तो अपनी रैयत को बेटे से भी ज्यादा चाहते हैं। उसमें ऐब निकाला ही क्या जा सकता है।'

दर्शनसिंह ने कहा—'अवध का इलाका जितना खुशहाल है, उतना मुल्क का कोई इलाका नहीं।'

कुछ गंभीर होकर नवाब साहब बोले—'मगर फिर भी हमको होशि-

यार रहना है, दर्शनसिंह ! रियाया की तकलीफों को हमें अपनी ही समझना चाहिए। उसकी तरक्की के लिये भी कुछ-न-कुछ करते रहना चाहिए। ये फिरंगी तो फसाद पर आमादा हैं।'

मंसूरअली ने कहा—'बेशक। हमको रियाया की तरफ भी तवज्जुह देना पड़ेगी। फिरंगी उसे हमारे खिलाफ़ भड़काने की कोशिश कर रहे हैं।

नवाब साहब उसी मुद्रा में बोले—'लेकिन फिर भी हम फिरंगियों से डर नहीं सकते। रियाया के साथ अच्छा या बुरा सलूक करना ये हमारी खुद की बात है। फिरंगी क्यों बीच में पड़ना चाहते हैं ?'

दर्शनसिंह ने कहा—'मालिके अवध को धमकाकर उनसे रुपया वसूल करने के लिये।'

'हुँ' कहकर नवाब साहब चुप हो गए।

तीनों थोड़ी देर तक चुप बैठे रहे। अंत में कुछ मुस्किराकर नवाब साहब ने कहा—'तुम लोग इस तरह खामोश क्यों हो गए ? क्या बादशाह बेगम ने फिर कुछ डांट-फटकार बतला दी।'

एकदम प्रसन्न होते हुए दर्शनसिंह ने कहा,' नहीं जहाँपनाह ! पर न जाने क्यों मलिका मुझसे कुछ नाराज़ रहती हैं।'

नवाब साहब मुस्किराते हुए बोले—'तुम फिक्र मत करो, दर्शनसिंह। मैं जिससे खुश रहता हूं, उससे वे आम तौर से नाराज़ रहती हैं। उनका मिजाज भी खूब है।'

दर्शनसिंह धीरे से बोले, 'हज़रत ठीक ही कह रहे हैं।'

नवाब साहब बोले—'मैं उनकी इज्ज़त करता हूँ, दर्शनसिंह ! मगर वे मेरी इन सब रियायतों का नाजायज़ फायदा उठाती रहती हैं।'

कहकर धीरे-से नवाब साहब ने साँस ली।

मंसूरअली ने कहा— 'मालिकेजहाँ किसे प्यार नहीं करते। अवध के तख्त पर हज़रत का होना हमारे लिये वायसे-फख्र है।

कड़ककर नवाब साहब ने कहा—'तुम कौन हो और उस दिन वहाँ किस इरादे से गए थे ? फौरन् जवाब दो।'

युवक ने निहायत अदब के साथ सिर झुकाते हुए कहा—'मैं मालिके अवध का एक अदना सा खादिम हूँ। मैं वहाँ किसी खास इरादे से नहीं गया था।'

नवाब साहब उसे फिरंगियों का भेदिया समझ चुके थे। उसी स्वर में बोले—'साफ साफ बयान दो। तुम उस दिन वहाँ मजदूरों से क्या कह रहे थे ?'

युवक क्षण-भर गंभीर भाव से खड़ा रहा; फिर बोला—'मैं मज़दूरों से महल बनाने का काम रोक देने के लिये कह रहा था।'

नवाब साहब क्रोध से दाँत पीसते हुये बोले, 'रोकने वाले तुम कौन थे ? तुम जानते थे कि इमारत सरकारी है ?'

युवक ने निर्भीकता के साथ उत्तर दिया, नहीं हुजूर, मुझे बतलाया गया था कि वह इमारत नवाब साहब की है।'

युवक की बात का अभिप्राय न समझते हुए नवाब साहब ने कहा—'मैं तुम्हारी बात नहीं समझा ? यह सच है कि तुम मज़दूरों को मेरे खिलाफ भड़का रहे थे ?'

युवक ने फौरन उत्तर दिया, 'जी हाँ'

नवाब साहब के जी में आया कि फौरन् ही सज़ाए मौत सुना दें, किंतु कुछ सोचकर बोले—'जानते हो कि मेरे खिलाफ़ ज़बान हिलाने वाले को सज़ाए मौत दी जाती है।

युवक बोला, 'लेकिन मैंने मालिके अवध के खिलाफ़ कुछ नहीं कहा।'

नवाब साहब कुछ परेशान-सा होते हुये बोले, 'तुम्हारा सिर फिरा हुआ है क्या ? तुम.........'

तभी मज़दूरों का नायक बोल उठा—'जी हाँ हुज़ूर, यह शख्स पागल है।'

कड़ककर नवाब साहब ने कहा—'तुम चुप रहो जी।'

अब युवक ने कहना शुरू किया, 'मैं खुद ही न सब कुछ अर्ज कर दूं मालिके अवध से। मैं आपके महल बनानेवाली बात को बुरा बतला रहा था।'

नवाब साहब के मुंह से निकला, 'तुम्हारी इतनी जुरअत कैसे हुई?'

युवक बोला—'मैं जिस बात को बुरा समझता हूं उसे कहने में पीछे नहीं हटता। मालिके अवध अगर गुस्ताखी मुआफ़ फरमायें, तो मैं हुजूर से दो-एक सवाल पूछूं।'

नवाब साहब ने कुछ सोच कर मज़दूरों के नायक से कहा, 'तू जा यहाँ से। तेरी फिलहाल मुझे कोई ज़रूरत नहीं।'

नायक अभिवादन करके—फौरन् चला गया। युवक की ओर मुंह करके नवाब साहब ने कहा, 'हाँ, अब तुम मुझसे सवाल कर सकते हो।'

युवक गंभीर होकर बोला—'मालिके अवध हमारे सरपरस्त हैं। हम मालिके अवध की रियाया हैं। हमारा हुजूर के लिये कुछ फर्ज है। हम अपना फर्ज अदा करते आए हैं। क्या इससे मालिके अवध को इनकार है?'

वह चुप होकर उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा। नवाब साहब बोले 'रियाया के खिलाफ मुझे कोई शिकायत नहीं है।'

युवक धीरे से बोला, 'मगर मालिके अवध का भी तो रियाया के लिये कोई फर्ज है। हम भी तो मालिके अवध से किसी तरह की उम्मीद रखते आए हैं। हुजूर क्या बतलायेंगे कि आपने अपना वह फर्ज कहाँ तक अदा किया है?'

नवाब साहब युवक की लंबी-चौड़ी बातों से ऊब से रहे थे। बोले—'हम रियाया के खिदमतगार हैं। हम हमेशा उसकी खिदमत करते रहते हैं।'

युवक बोला—'खता मुआफ हो, लखनऊ में हजारों वाशिंदों के पास रहने के लिये झोपड़े भी नहीं हैं। मालिके अवध ने उनके लिये क्या किया?'

नवाब साहब बोले, 'मैं सभी के आराम का खयाल रखता हूं। लेकिन इन बातों के लिये बहुत सा रुपया चाहिए। तुम इन बातों को क्या समझ सकते हो?'

युवक ने कहा—हुजूर का 'फरमाना दुरुस्त है, लेकिन फिर जो आपके महलों को बनाने में जो रुपया सर्फ होता है वह कहाँ से आता है?'

नवाब साहब को आज ज़िंदगी में नई-नई बातों का मुकाबला करना पड़ रहा था। बोले—'वह रुपया खुद मेरा है।'

युवक बोल उठा, 'आपके पास रुपया कहाँ से आया, जहांपनाह! रियाया ही ने तो वह रुपया हुज़ूर को दिया है। रियाया से पाया हुआ रुपया हुज़ूर को अपने महलों में खर्च करने का क्या हक है। वह तो रियाया पर ही खर्च होना चाहिए।'

नवाब साहब एक अनोखी बात सुन रहे थे। वह चुप रहे।

युवक कहता गया, 'आप रियाया से रुपया उसकी भलाई में ही खर्च करने के लिये लेते हैं। उसमें से अपने गुजारे भर के लिये आप ले सकते हैं। बाकी रुपया आपको उन कामों में खर्च करना चाहिये जिससे रियाया का फायदा हो। रियाया का फ़ायदा मुल्क का फ़ायदा है। उसी से तो अवध की तरक्की होगी। अवध की तरक्की से ही तो जहाँपनाह का नाम रोशन होगा। आपने लखनऊ में ऐसी कौन-सी इमारत बनवा दी है, जिससे रियाया फायदा उठा रही हो? महलों में सर्फ किया हुआ रुपया रियाया के तो काम आ नहीं रहा है।'

नवाब साहब अब बोले—'बेशक तुम एक नई तरह की बात कह रहे हो जवान; जो काबिले गौर है। लेकिन तुम पर इतमीनान कैसे किया जाय? तुम फिरंगी के भेदिए तो नहीं हो?'

युवक का चेहरा तमतमा उठा था। वह बोला—'फिरंगियो और फिरंगियों के जो भेदिए हैं मैं उन पर लानत भेजता हूं। मैं मालिके

अवध की रियाया हूं और मुझको इस पर फख्र है। हाँ, अगर मालिके अवध ने आज मेरी बात पर गौर न फरमाया तो मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि हमारे इस हरे-भरे चमन को फिरंगी ज़रूर हड़प जायेंगे। रियाया से रुपया वसूल करके उसका तीन चौथाई रियाया पर ही खर्च कर देना फिरंगियों के ही मुल्क का उसूल है।'

नवाब साहब ने आश्चर्य के साथ पूछा, 'क्या फिरंगियों का बादशाह ऐसा ही करता है?'

युवक ने कहा—फिरंगियों के बादशाह को तो एक धेला भी खर्च करने का हक़ नहीं है। रियाया के नुमाइन्दे ही उस पैसे को खर्च कर सकते हैं। उसे तो अपने खर्च के लिये गिने हुए ही पैसे मिलते हैं।'

नवाब साहब को ये सारी बातें सुनकर बड़ा आश्चर्य हो रहा था। बोले—'तो फिर बादशाह की शानो-शौकत....'

बात काट कर युवक बोला—'ये सब रियाया के नुमाइन्दे ही करते हैं। यह उनका काम है कि वे अपने बादशाह को जिस शानो-शौकत के साथ रखना चाहें, रक्खें। अपने मुल्क की नामवरी और बद-नामी का उन्हीं को खयाल रखना पड़ता है।'

नवाब साहब इन सब नई बातों पर मुग्ध से थे। 'बोले—यह कायदा तो निहायत पसंद आया मुझे। फिरंगियों की चालें भी मैं समझ रहा हूं। इसी तरह वे इस मुल्क को हथिया लेना चाहते हैं।'

युवक अपनी बात जमती देख बोला—अगर रियाया हमारे साथ है, तो कोई हमारा कुछ बिगाड़ नहीं सकता।'

थोड़ी देर चुप रहकर नवाब साहब बोले, 'मैं रियाया की भलाई करना चाहता हूँ। क्या तुम इस नेक काम में मेरी मदद कर सकोगे?'

युवक निहायत अदब के साथ बोला, 'मैं निहायत ही मामूली आदमी हूँ। इसके अलावा बरसों से अपनी रोटियों के लिये भी परेशान

हूँ। मैं भला आपकी मदद करने लायक किस तरह हो सकता हूँ। वैसे हुजूर का यह अदना गुलाम हाजिर है।'

नवाब साहब उठ कर उसके पास जा पहुँचे तथा प्रेम से उसका हाथ पकड़ते हुए बोले—'मुझे तुम्हारी दोस्ती पर फख्र रहेगा, नौजवान! तुम आज से हमारे दोस्त हुए।'

युवक बड़े ही साधारण कपड़ों में था। वह बोला—'क्या आपके दोस्त, और सलाहकार कभी इस दोस्ती को पसंद करेंगे?

नवाब साहब उमंग में थे। बोले, 'किसकी मजाल है जो तुम्हारी तरफ आँख भी उठा सके। नवाब गाजीउद्दीन हैदर को क्या तुमने मामूली आदमी समझ लिया है!'

युवक ने बड़े आदर के साथ नवाब साहब का अभिवादन किया और कहा—'मैं आपका खादिम हूँ। अगर आपके लिये मेरी खाल भी········।'

युवक के मुँह पर हाथ रखते हुए नवाब साहब ने कहा—'च-च-च मेरे लिये नहीं, बल्कि रियाया के लिये कहो मेरे दोस्त! आज से मैं भी अपने को अवध की रियाया का खादिम ही समझूँगा।'

युवक गद्‌गद हो उठा। नवाब साहब ने गंभीर होकर कहा—'आज से हज़ार रुपया महीना तुमको वसीका मिलेगा। तुम्हारे रहने का मेरे ही महल में इन्तजाम किया जायगा।'

युवक बोला, 'यह सब मेरे लिये बहुत है हुज़ूर। मैं तो थोड़े ही में गुजर करनेवाला आदमी हूँ। सिर्फ पांच सौ रुपए ही मेरे लिये बहुत होंगे।'

बेतकल्लुफी के साथ आँख तरेरते हुए नवाब साहब बोले—'नवाब गाजीउद्दीन हैदर के दोस्त को जरा अच्छी ही तरह रहना पड़ेगा, बेवकूफ।'

और वे खिलखिलाकर हंस पड़े।

युवक फिर कुछ न कह सका। नवाब साहब ने धीरे से कहा—

'और अब तक मैं अपने दोस्त का नाम भी न जान सका।'

युवक बड़े ही संकोच के साथ बोला—'मेरा नाम मोतमुद्दौला है। लोग मुझे आगामीर कहकर पुकारते हैं।'

[४]

आगामीर जैसे कार्यशील और कुशाग्र बुद्धि के व्यक्ति से मित्रता स्थापित करके नवाब साहब बड़े ही प्रसन्न थे। वह आराम से पलंग पर आकर लेट गए। अन्य मंत्री उनके मनोरंजनार्थ उनके निकट जाने की प्रतीक्षा में थे, किंतु आज नवाब साहब किसी और ही मूड में थे। उन्होंने अकेले ही रहना पसंद किया। आज न जाने क्यों उनका मस्तिष्क फिरंगियों की समस्या ही में बार-बार उलझ रहा था। क्या सचमुच अंगरेज अवध को हड़प जाने का षड़यंत्र रच रहे हैं? यह नौजवान आगामीर क्या सचमुच इस षड़यंत्र से उनकी रक्षा कर सकेगा? इन नमकहराम मंत्रियों को क्या इतना भी नहीं सूझता? ये फिरंगियों से मिले तो नहीं हुए हैं? तब क्या करना होगा? रैयत को किस तरह संतुष्ट करके उसे खैरख्वाह बनाया जाय?

सोचते-सोचते नवाब साहब का मस्तिष्क बोझिल हो उठा। जीवन में प्रथम बार ही उनका ध्यान रियासत की राजनैतिक स्थिति की ओर आकर्षित हुआ था। वह घबड़ाकर पलंग पर बैठ गए।

तभी सेवक ने आकर अभिवादन किया और कहा—'कासिम खाँ दरे दौलत पर हाजिर है।'

कासिमखाँ का नाम सुनकर फिर एक बार उनके चेहरे पर प्रसन्नता आ गई। सारी राजनीति अतीत के गर्भ में चली गई।

वे प्रसन्न होकर बोले—'फौरन हाजिर किया जाय।'

नवाब साहब आराम और ऐश चाहते थे। वे समझ गए कि कासिम किसी सुंदरी को ही लेकर आया होगा।

कासिम ने आकर अदब से सलाम किया और झुककर खड़ा हो गया।

नवाब साहब ने कहा—'क्या खबर है कासिम हुसेन ? क्या खाली हाथ ही आए हो ?'

झुक कर फिर आदाब बजाते हुये कासिम ने कहा—'मालिके अवध के सामने खाली हाथ आकर खड़े होने की मजाल कासिम में नहीं है। परी-रू हाजिर है।'

प्रसन्न होकर नवाब साहब ने कहा, 'शाबास। उसे आरामगाह में पहुँचाने का फौरन् इंतिजाम किया जाए। जाओ।'

कासिम चला गया।

नवाब साहब धीरे से उठे और कुछ गुनगुनाते हुए दूसरे कमरे में चले गए।

× × ×

हम इस स्थल पर नवाब साहब के अन्तःपुर की सैर कराना चाहते हैं।

अन्तःपुर क्या है हम उसे परिस्तान भी कह सकते हैं। नवाब साहब की दर्जनों बेगमें हैं। सभी शान व शौकत के साथ रहती हैं। सबके अलग-अलग सुंदर से महल हैं। सभी को व्यय के लिये राज्य की ओर से अच्छी-खासी रकम मिलती है। नवाब साहब की कभी किसी पर अधिक कृपा रहती है और कभी किसी पर। जिस पर नवाब साहब की दो रोज भी कृपा हो जाती, वह बरसों के निहाल हो जाती है।

इन सुंदरियों में न जाने कितनी ऐसी भी हैं, जिनकी तृप्तियों की केवल भूमिका ही लिखकर उन्हें छोड़ दिया गया है। न जाने कितनी ऐसी भी हैं, जिन्हें जीवन में केवल एक बार ही पुरुष की संज्ञा समझने को मिली है। वे आज अतृप्ति के अभिशाप में बुरी तरह जल

रही हैं; इस ऐश्वर्य-मंदिर के अंदर रह कर भी। इस अंत:पुर के अंदर विलास बहता है, ऐश्वर्य लहरें लेता है, कामुकता नृत्य करती है तथा अतृप्ति उसासें भरती रहती है। इन वेगमों का वाह्य संसार से किसी भी प्रकार का संबंध नहीं रह गया है। यह अंत:पुर ही इनका संसार है। नवाब साहब ही उनके भगवान् हैं। वासना ही उनकी उपासना है तथा तृप्ति ही इनका निर्वाण है।

अंत:पुर में पुरुष का प्रवेश वर्जित है, फिर भी यदा-कदा कुछ घटनाएँ हो ही जाती हैं। इसके फलस्वरूप तृप्ति-मंदिर में कुछेक प्राणियों की भेंट चढ़ जाती हैं। इसी प्रकार की घटनाएँ अंत:पुर का इतिहास बनाती रहती हैं।

क्या विडम्बना है ? इस वैभव तथा ऐश्वर्य का एकत्रीकरण केवल एक ही व्यक्ति की भूख मिटाने के लिये किया गया है। उसकी इस भूख पर निर्भर रहनेवाले प्राणियों की क्षुधा तड़प-तड़पकर भले ही रह जाय किन्तु इससे उसे क्या ? इस भयानक भूख की भीषण कथाएँ नवाव-युग की एक अपनी ही मौलिकता है।

नवाब गाजीउद्दीन हैदर की प्रमुख वेगम हैं कुतफुन्निसा। इन्हें इतिहास में वादशाह वेगम कहकर पुकारा गया है। वे दिल्ली-सम्राट् के वंश की थीं। नवाब साहब पर केवल उन्हीं का प्रभुत्व चलता था। राज की व्यवस्था में केवल उन्हीं को हस्तक्षेप करने का अधिकार था, क्योंकि उन्हीं का पुत्र भविष्य में अवध के सिंहासन को सुशोभित करेगा। यद्यपि नवाब साहब को उनका हस्तक्षेप पसंद न था किंतु वह विवश थे। युवराज की मा के नाते विधान ने ही उनको यह अधिकार प्रदान कर रक्खा था। नवाव साहब के मुख्य महल में केवल वे ही रह सकती थीं। यही कारण था कि नवाव साहब ने अपने लिये एक सुन्दर सा आरामगाह अपने महल से भी अलग वनवा रक्खा था। कासिम हुसेन इस आरामगाह का परिचालक तथा व्यवस्थापक था।

संध्या का समय है । बादशाह बेगम रत्नों से जड़ित पलंग पर आराम से लेटी हुई धीरे-धीरे पान चबा रही हैं। पास ही में सिरहाने उनकी मुँहलगी बांदी कुलसूम बैठी उनका जी बहला रही है ।

बादशाह बेगम धीरे से बोलीं, 'न जाने आजकल हजरत किस उधेड़-बुन में मुब्तिला रहते हैं। दो रोज हो गए इस तरफ तशरीफ भी नहीं लाए ।'

बांदी कुटिल मुस्कान के साथ बोली—हजरत आजकल और ही रंग में हैं। इधर तशरीफ लाना जरा मुश्किल ही है ।'

कुछ परेशान सी होकर बादशाह बेगम ने कहा, ' क्या इस उम्र में भी कोई नया रंग आनेवाला है ?'

बांदी मुस्किराती हुई बोली, 'मालिके अवध कभी सिनदराज नहीं होते। वह तो हमेशा जवान ही रहते हैं। और फिर हमारे हजरत ? अभी उनकी उम्र ही क्या है ?'

बादशाह बेगम हल्की सी मुसकान छोड़कर किंचित् गंभीर हो गईं। बांदी कुछ और कहना चाहती थी किन्तु चुप रही ।

थोड़ी देर बाद बादशाह बेगम के मुँह से निकला, 'हूँ ! तब यूँ कहो कि हजरत आजकल किसी नये रंग में हैं।'

बांदी को बोलने का अवसर मिला। वह बोली—'एक तो मालिके जहां को आजकल फिरंगियों ने बुरी तरह से परेशान कर रक्खा है। सुना है उनका कोई भेदिया पकड़ा भी गया है ।'

कुछ आश्चर्य सा प्रकट करती हुईं बादशाह बेगम ने कहा—'भेदिया पकड़ा गया है ? फिरंगियों को यह सब क्या सूझ रही है ? मैं हजरत से कह दूँगी कि वह इनको लखनऊ से निकाल बाहर करें।'

बांदी ने कहा—'मालिके अवध को जो नई-नई इमारतें बनवाने का शौक है, उसे शायद फिरंगी पसंद नहीं करते। सुना है, यह भेदिया यही कहने आया था।'

बेगम पूछ बैठीं—'फिर हुआ क्या ?'

बांदी बोली—'उसे फिलहाल कैद कर लिया गया है। यह भी सुना है कि इससे फिरंगी बुरी तरह चिढ़ गए हैं।'

चेहरे पर क्रोध का भाव लाकर बादशाह बेगम बोली —'हम चाहे जो कुछ करें फिरंगी क्या इसके ठेकेदार हैं ? हजरत को उन्हें ज़रूर सजा देना चाहिए। भेदिया का तो सिर काटकर लटका देना चाहिए। हजरत ने क्या किया है इस बारे में ?'

बांदी को कुछ मालूम न था, किंतु अपनी अहमियत स्थापित करने के लिये कुछ-का-कुछ कहे जा रही थी। बोली—'सुना है हजरत फिरंगियों से मिलनेवाले हैं। वह भेदिया हजरत से कुछ बात ही नहीं करता है।'

चिंतित होकर बादशाह बेगम चुप हो गएं। बांदी फिर बोली, 'आप हजरत से ज़रूर बात करें।'

सिर हिलाते हुये बादशाह बेगम ने कहा—'मिलना ही होगा। आज मैंने हजरत के पास मिलने की इल्तिजा भेजी थी। उन्होंने कल तशरीफ लाने के लिये कहला भेजा है। आज उन्हें कुछ जुरूरी काम है। शायद आ न सकेंगे।'

बांदी थोड़ी देर चुप रह कर बोली—'मालिकेजहां का जो नया महल बन रहा है शायद फिरंगी उस पर अपना कब्जा करना चाहते हैं।'

क्रोध में भरकर बादशाह बेगम ने कहा—'नया महल फिरंगी लेंगे ? मुंह धो रक्खें अपना। अगर यही हाल रहा, तो एक दिन वे सारा अवध ही हड़प कर जायेंगे।'

बांदी बोली—'लोगों का तो यही कहना है कि अवध को हड़प जाने के लिये ही ये सारी पेशबंदियां की जा रही हैं। रियाया को भी नवाब साहब के खिलाफ भड़काया जा रहा है।

बेगम चिंता में डूब गईं। उन्हें इस प्रकार चिंता में निमग्न देख बांदी ने कहा, 'आप क्यों फिक्र कर रही हैं, मलिकेजहाँ! फिरंगियों की क्या मजाल जो सलतनते अवध की तरफ आँख उठा कर भी देख सकें।

बेगम चुप रहीं। रात बीतने लगी थी। कुछ अलसाकर बेगम साहबा ने कहा--'अब तो मुझे नींद आ रही है कुलसूम। हजरत तो आज आ न सकेंगे। मैं भी सोना चाहती हूँ।'

बांदी उठकर खड़ी हो गई। बेगम आराम से पलंग पर लेटती हुई बोली—'तुम सवेरे ही हजरत के पास खादिम को भेज कर कहलवा देना कि बेगम साहबा आपका नियाज हासिल करने के लिये बेचैन हैं। कुछ ज़रूरी बात अर्ज करनी है।'

'जो हुक्म' कहकर बांदी धीरे से चली गई।

[५]

नवाब साहब धीरे से कमरे में घुसकर खड़े हो गए।

सामने ही पलंग पर सिकुड़ी हुई स्वर्ग की-सी अप्सरा बैठी नखों से जाली कुरेद रही थी। आहट पाकर उसने सिर उठाया। नवाब साहब की आंखें अनायास ही मिल गईं।

नवाब साहब इस स्वर्गीय सौंदर्य को देखकर मुग्ध और चकित से रह गए।

वह धीरे से आकर पलंग पर बैठ गए और बोले, 'मुझसे कुछ नाराज तो नहीं हो हुस्न की मलिका। तकलीफ के लिये मुआफी का ख्वास्तगार हूँ।'

सुंदरी संभल गई। उस वैभव के नीचे आकर, जिसकी उसने जीवन में कभी कल्पना भी न की थी। रशीदा का हृदय फिसलने-सा लगा था, किन्तु उसने थोड़ी ही देर में अपने को सँभाल लिया। उसे

मालूम था कि यह सब मृग-तृष्णा है। नवाबों के प्रेम से वह भलीभांति परिचित थी। वह इस क्षणिक सुख के लिये कभी न गिरेगी। थोड़े ही दिनों में उसे सब कुछ लुटाकर अंतःपुर के बंदी-गृह में अपना शेष जीवन व्यतीत करने के लिये बाध्य होना पड़ेगा। नवाब साहब उस भौंरे की भाँति हैं, जो फूल को चूसकर फिर उसे सूखने के लिये छोड़ कर सदा के लिये दूसरे पुष्प की खोज में चला जाता है। यहाँ प्रेम की बू-बास नहीं। केवल वासना की तृप्ति के लिये यहाँ सभ्यता और लोभ का जाल बिछा रहता है। प्रेम के केवल नाटक रचे जाते हैं।

नवाब साहब ने उसका हाथ अपने हाथ में लेने की चेष्टा की किंतु रशीदा उठकर खड़ी हो गई। नवाब साहब ने भी इसे अदा के नाटक का एक दृश्य ही समझा। हँस कर बोले 'तब क्या सचमुच ही नाराज हो ? मैं तो तुम्हें देखकर दीवाना हो गया हूँ। सच कहता हूँ मैंने अपनी जिन्दगी में ऐसा बेलौस हुस्न देखा ही नहीं।'

वह धीरे से रशीदा की ओर बढ़े। रशीदा जरा पीछे हटती हुई बोली—'हुजूर गुस्ताखी मुआफ करें। मैं आपसे कुछ अर्ज करना चाहती हूँ।'

नवाब साहब बात की गंभीरता बिना समझे हुये ही बोले—'जो कुछ कहना चाहती हो उसके कहने का बहुत वक्त मिलेगा। तुम जो कहोगी वही करूँगा मैं तुम्हारे लिये। लेकिन इस वक्त बात करने की फुरसत नहीं है। मैं बावला हो रहा हूँ तुम्हारे लिये परी।'

और उन्होंने रशीदा का हाथ पकड़ कर उसे अपनी ओर खींच लिया।

रशीदा उसी अवस्था में बोली, 'आप मालिकेजहाँ हैं, आप हमारे सरताज हैं, हम आपके खादिम हैं, आप हमारे आका हैं........।'

नवाब साहब बोल उठे—'हो-हो, मगर....।'

रशीदा बोली—'हमारा सब कुछ आपका है। आप जो चाहें, कर

सकते हैं। मगर, आप ठीक से बैठ जायें और मेरी भी कुछ सुन लें। उसके बाद मैं हूँ, सारी रात है और आप हैं। जो जी में आए कीजिएगा। आपको रोक कौन सकेगा? किसी में ताकत नहीं—मुझमें भी नहीं.........।'

नवाब साहब को ये बातें इस समय अच्छी न लग रही थीं, किंतु वह बोले। 'जो कुछ कहना है जल्द कह डालो, या बाद में भी तो...।'

रशीदा जरा स्फुट-स्वर में बोली—'मुझे जो कुछ कहना है, अभी कहूँगी। बाद में कहना बेकार है। आप जरा बैठ जायें।'

व्यर्थ में समय नष्ट होता देख नवाब साहब ने रशीदा को छोड़ दिया।

रशीदा धीरे से बोली—'आप जरा बैठ जाये हुजूर।'

नवाब साहब झल्लाकर बैठ गए। रशीदा उनके पास ही खड़ी हो गई। वह कुछ उतावले-से स्वर में बोले, 'अब जल्दी कह डालो जो कुछ कहना है।'

रशीदा धीरे से कहने लगी, 'आपने मुझे यहां किसलिये बुलवाया है हुजूर? मैं सबसे पहिले यही जानना चाहती हूँ।'

नवाब साहब कुछ परेशान सा होकर बोले—'तुम्हें यह भी नहीं मालूम क्या? बात यह है कि मैं तुम्हें चाहता हूँ। तुम पर पागल हो रहा हूँ।'

रशीदा फौरन् बोल उठी—'लेकिन क्या आज के पहले हुजूर ने मुझे कभी देखा है?'

नवाब साहब बोले, 'नहीं। आज ही तो तुमको देखकर पागल हो गया हूँ। यही जानना था या और कुछ?'

नवाब साहब की उजलत की बिना परवाह किये रशीदा कहती गई, 'जब आपने पहिले कभी मुझे देखा न था, तो आप मुझ पर पागल कैसे हो गए? जरा बतलाने की मेहरबानी फरमाएँगे। तभी तो मैं

पूछ रहीं हूँ कि आपने मुझे कैसे बुलवाया ?'

नवाब साहब निरुत्तर हुए जा रहे थे। बोले, 'मैं नहीं जानता था कि तुम इतनी खूबसूरत हो....।'

रशीदा बोल उठी। 'न आप यह जानते थे कि मैं खूबसूरत हूँ और न अपने पहले कभी मुझे देखा ही था। तो आप एकाएक ही मुझे चाहने लगे ? प्यार करने लगे ? 'यह कैसे ?'

रशीदा की बातों से ऊबकर नवाब साहब बोले, 'तुम जो भी चाहो, समझ लो; लेकिन मैं तुम पर मर मिटा हूँ हुस्नेजहाँ।'

रशीदा बोली, 'तब यह कहिए कि आपका रोज़ का यही काम है। नई-नई औरतों को रोज अपने महल में बुलाकर अपनी ख्वाहिश पूरी करना। आपको मालूम होना चाहिए हुज़ूर कि मैं भले घर की बेटी हूँ। आप अपनी रियाया की बहू-बेटियों को जितना गिरा हुआ समझते हैं, मैं उतनी नहीं हूँ। मुझे मेरी मंशा के खिलाफ़ यहाँ लाया गया है। आप मुझे वापस जाने दें। यही मुझे अर्ज़ करना है।'

नवाब साहब का नशा अब कुछ उतर चला था। बोले, 'तुम यह क्या नासमझी की बात कह रही हो। मेरे पास रहना क्या तुम्हारे लिये बायसे फख्र नहीं है। मैं तुम्हें सब कुछ बना सकता हूँ।'

रशीदा बोली, 'लेकिन मैं कुछ भी नहीं बनना चाहती। आप यह इज्ज़त उसे बुलाकर बख्शें जो, इसका भूखा हो। आप रियाया के बाप हैं। अपनी ही बहू-बेटियों को इस तरह बुलाकर उन्हें बेइज्जत करना आपको ज़ेबा नहीं देता।'

नवाब साहब को आज यह दूसरी ठोकर मिल रही थी। झुंझला-कर बोले, 'लेकिन मैं जो चाहूँगा, तुमको वही करना पड़ेगा। यहाँ तुम्हारी मर्ज़ी नहीं चलेगी।'

रशीदा चेहरा लाल करके बोली, तब, ठीक है। मैं आपकी सभी ख्वाहिशें पूरी करने के लिये तैयार हूँ। आइए।'

कहकर रशीदा पलँग पर आकर बैठ गई।

नवाब साहब का हाथ न उठा। वह धीरे से बोले, 'तब तुम चाहती क्या हो ?

गंभीर भाव से रशीदा बोली, 'मैं चाहती क्या हूँ ? मैं जो चाहती हूँ, उसे शायद आप पसंद न करेंगे। मैं चाहती हूँ, जहन्नुम की तरफ़ जाती हुई इस सलतनते अवध को बचाना। जिस रियासत का आप-जैसा ऐयाश और नासमझ हुक्मराँ हो, उसके जाने में अब कितनी देर है, यह लखनऊ का हर बाशिंदा समझ रहा है। सबसे ज्यादा समझ रहे हैं वे फिरंगी, जो जल्दी-से-जल्दी अवध के इस हरे-भरे चमन को हड़प जाना चाहते हैं। अफ़सोस तो यह है कि उधर इस तरह की साजिशें चल रही हैं और इधर इस मुल्क का मालिक रंगीनियों में डूबकर अपनी ही रैयत को अपना दुश्मन बनाता चला जा रहा है। अफ़सोस !'

कहकर रशीदा ने एक लंबी साँस ली और चुप हो गई। नवाब साहब सोच में पड़ गए। आज थोड़ी देर पहले वह आग़ामीर से इसी तरह की बातें सुन चुके थे। वह चुप बैठे रहे।

अपनी बात का प्रभाव पड़ता देख रशीदा कहने लगी, 'आपका हरम भरा हुआ है बेगमों से। मैं भी उसी में जाकर मिल जाऊँगी। मेरी जवानी से दस-पाँच दिन खेल कर आप शायद मुझे भी भूल जायँगे जैसे न जाने कितनी परियों और हुस्न आराओं को भूल गए हैं। हाँ, किसी दिन आपको मेरी ये बातें जरूर याद आएँगी। आप चुप क्यों बैठे हैं ? मैं आपके पास हूँ। आप जिस तरह चाहें, अपनी हविश पूरी कर सकते हैं। मैं तो आपको साफ़ तौर से बतला देना चाहती हूँ कि मैं तो आपको उतना ही प्यार कर सकूँगी, जितना रियाया अपने बादशाह को प्यार कर सकती है या जितना एक बेटी अपने बाप को आप मेरे बाप हैं। अब आप बेटी के साथ जिस तरह का सलूक करना चाहें, कर सकते हैं।'

नवाब साहब का सारा नशा उतर गया। कुछ देर सोचकर बोले, 'मैं तुम्हें अपनी बेटी तो नहीं बना सकता, लेकिन हाँ, एक सच्चा दोस्त

जरूर बना सकता हूं। आज ही मैंने एक शख़्श को अपना दोस्त बनाया है। वह सलतनते अवध का सबसे बड़ा खैरख्वाह है। मैं आज से तुमको भी उसी तरह का दोस्त बनाता हूं। हां, तुम्हारा नाम......।'

रशीदा बोल उठी, 'मुझे रशीदा बानू कहते हैं।'

नवाब साहब बोले, 'मैं बहुत ही खराब आदमी हूं रशीदा। लेकिन मैं बात को समझने की कोशिश ज़रूर करता हूं। तुम आग़ामीर को जानती हो ?'

आश्चर्य की मुद्रा में रशीदा ने पूछा, 'कौन आग़ामीर ?'

धीरे से नवाब साहब ने कहा, 'आज इसी नाम के एक शख़्श को मैंने अपना दोस्त बनाया है। उसने भी तुम्हारी ही तरह मुझसे बात की है। उसने भी मुझे बताया कि मेरी कमज़ोरियों का नाजायज़ फ़ायदा उठाकर फिरंगी इस मुल्क को हड़प जाना चाहते हैं। वे मेरी ही रियाया को भड़काकर मेरे खिलाफ़ कर देने की फिक्र में हैं। तुम्हारा क्या खयाल है इस बारे में ? क्या सचमुच रियाया मेरे खिलाफ़ हो रही है ?'

रशीदा बोली, 'आपकी रियाया आप पर जान देती है। आप ज़रा समझ से काम लें, तो फिरंगी आपका कुछ न बिगाड़ सकेंगे।'

कुछ सोचकर नवाब साहब बोले, 'इन फिरंगियों में खास बात क्या है। क्या इनके बादशाह ऐश व आराम नहीं करते ?'

रशीदा बोली, 'मैंने सुना है कि फिरंगियों के बादशाह सिर्फ एक ही बेगम रख सकते हैं। एक से जियादा बेगम रखना मना है। यही नहीं कोई भी फिरंगी एक से ज़ियादा बीबी नहीं रख सकता। सुना है, उनके मजहब में भी इसकी मुमानियत है।'

नवाब साहब थोड़ी देर तक चुप रहे फिर रशीदा का हाथ पकड़ते हुए बोले, 'अच्छा दोस्त, अब मैं इस रियासत की हरएक बात बदल देने की कोशिश करूंगा। इन नमकहराम और हां में हां मिलानेवाले वज़ीरों को अलग करके सिर्फ़ तुम्हीं दोनो दोस्तों की मदद से हुकूमत करूंगा। मगर एक बात रह जाती है ?'

रशीदा ने पूछा, 'वह क्या ?'

नवाब साहब ने कहा, 'आग़ामीर की तरह तुमको भी मेरे ही पास रहना होगा। तुमको लोग भले ही मेरी नई बेगम समझ लें, लेकिन तुम अब रहोगी मेरे साथ ही। मैं तुमसे बेटी का सा ही वर्ताव करूँगा। मंजूर है ?'

रशीदा बोली, 'मैं लोगों की परवा नहीं करती। मुझे तो सलतनते अवध के लिये अगर अपनी जान भी देना पड़े, तो दूँगी। किसी के कहने-सुनने से किसी का आगे बढ़ना रुक थोड़े ही जायगा। मुझको आपकी सभी बातें मंजूर हैं।'

नवाब साहब प्रसन्न होकर बोले, 'बहुत ख़ूब। मैं कल ही आग़ामीर से तुम्हारी मुलाक़ात कराऊँगा। तुम आज यहीं सो सकती हो। कल तुम्हारे लिये दूसरा इंतज़ाम हो जायगा। मैं अब सोने जा रहा हूँ, रशीदा। ख़ुदा हाफिज।'

रशीदा झुककर आदाब बजालाई। नवाब़ साहब चले गए।

[६]

अवध के मुसलमान दर्शनसिंह से जलते थे। नवाब साहब के विश्वासपात्र होने के कारण लखनऊ में उनकी हुकूमत चलती थी। वह हृदय से प्रजा की भलाई चाहनेवालों में से थे। उनकी वजह से प्रजा पर कोई ज़्यादती न कर पाता था। दर्शनसिंह चरित्रवान तथा आदर्शवादी गृहस्थ थे। यही कारण था कि नवाब साहब के शासन संबंधी कार्यों में तो उनकी पूरी दिलचस्पी थी, किन्तु उनकी विलासिता से वे कोसों दूर रहते थे।

लखनऊ उस समय विलासिता का केंद्र बना हुआ था। नवाब साहब तथा उनके मुसाहिबों की विलासिता इतनी अधिक बढ़ गई थी कि कोई भी नागरिक किसी समय भी उनका लक्ष्य बन सकता था। व्यापार एवं

उन्नति के साधन धीरे-धीरे गिरते जा रहे थे। एक अस्त-व्यस्तता सर्वत्र फैली हुई थी। फिरंगियों ने स्वर्ण अवसर पाकर उस अस्त व्यस्तता में और भी धक्के लगाने शुरू कर दिए।

दर्शनसिंह सब कुछ समझ रहे थे। उन्होंने शासन का भार हाथ में लेते ही नागरिकों को राज्य की ओर से सुरक्षा का केवल आश्वासन ही नहीं दिया, वरन् उन्हें यथाशक्ति भय-मुक्त भी किया। राज-कर्मचारियों को आज्ञा दी गई कि वे जनता पर किसी प्रकार की ज्यादती न करें। ऐसा करनेवालों को दर्शनसिंह ने कड़ा-से-कड़ा दंड देना शुरू किया। अस्त-व्यस्तता कुछ हद तक दूर हुई। भय-मुक्त होकर लोग दर्शनसिंह के शासन की प्रशंसा करने लगे।

सुसंचालित व्यवस्था राज्य के उन अन्य मुसाहिबों और मंत्रियों को रुचिकर प्रतीत न हुई, जो नवाब साहब की ऐयाशी का अनुचित लाभ उठाया करते थे। वे दर्शनसिंह से जलने लगे। दर्शनसिंह द्वारा लगाए हुए कड़े प्रतिबंधों के कारण वे जनता पर अब किसी प्रकार का ज़ोरो-ज़ुल्म न कर पाते थे। ये मुसाहिब लोग फिरंगियों की भी हाँ-में-हाँ मिलाते रहते थे। दर्शनसिंह को यह बात नापसंद थी। वह समझते थे कि फिरंगी इस देश के शत्रु हैं और अराजकता फैलने से वे प्रसन्न होते हैं। दर्शनसिंह अन्य मुसाहिबों की भाँति न तो विलासिता में डूबने वाले व्यक्ति थे और न नवाब साहब की मित्रता ऐसे लोगों से पसंद ही करते थे।

इसका परिणाम यह हुआ कि दर्शनसिंह ने राज्य के लगभग सभी मुसाहिबों को अपना शत्रु बना लिया। इन लोगों ने नवाब साहब के कान दर्शनसिंह के विरुद्ध भरने शुरू कर दिए। दर्शनसिंह पर यह भी इलज़ाम लगाया गया कि वह राज्य के हिंदुओं का पक्ष लेते हैं तथा उन्हें संपन्न बनाकर अवध में हिंदू-राज्य की स्थापना करना चाहते हैं। फिरंगियों ने भी इस बात के प्रचार में योग दिया। नवाब साहब पर इन

बातों का काफ़ी प्रभाव पड़ा और वह दर्शनसिंह को पद-च्युत करने का अवसर देखने लगे।

दर्शनसिंह की सबसे बड़ी शत्रु थीं बादशाह बेगम। वह भला यह कब सहन कर सकती थीं कि किसी भी व्यक्ति का राज्य में इतना प्रभुत्व बढ़ जाय। वह भी जी-जान से दर्शनसिंह के अनिष्ट-साधन में लग गईं।

इतिहास बतलाता है कि इस देश का सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह रहा है कि यहाँ व्यक्तिगत स्वार्थ के कारण बड़े-बड़े शक्तिशाली साम्राज्य नष्ट हो गए। जयचंद और पृथ्वीराज चौहान के व्यक्तिगत झगड़ों ने ही इस देश को मुसलमानों के हाथ सौंप दिया था। राजस्थान की सारी महाशक्तियाँ सदा व्यक्तिगत झगड़ों के ही कारण नष्ट हुईं। राजा मानसिंह ही हिंदू-सम्राट् महाराणा प्रताप की सारी मुसीबतों का कारण बना। यदि राजस्थान की सारी शक्तियाँ मिल जातीं, तो कदाचित् मुगल-सम्राट् सम्राट् ही न रह पाते। इतने शक्तिशाली हिंदू राजा-महाराजाओं के होते हुए भी महमूद गजनवी सबको रौंदता हुआ सोमनाथ का मंदिर विध्वस करने गुजरात पहुंच गया। यह था व्यक्तिगत स्वार्थों को लेकर लड़ते रहने का दुष्परिणाम।

अवध में इस समय वही बात प्रत्यक्ष रूप से दिखलाई पड़ रही थी। जो व्यक्ति वास्तव में राज्य तथा नवाब का हितैषी था, वही धीरे-धीरे नवाब तथा उनके मुसाहिबों की आलोचना का लक्ष्य बन गया। दर्शनसिंह को सारे राज्य में एक भी समर्थक तक मिलना दूभर हो गया।

हम कह चुके हैं कि दर्शनसिंह की सबसे प्रमुख शत्रु थीं स्वयं बादशाह बेगम। उन्हें पूर्ण रूप से विश्वास दिला दिया गया था कि दर्शनसिंह ने अवध से मुसलमानी राज समाप्त करने का भीषण षड्यंत्र रचा है। वह प्रजा को भड़काकर अपनी ओर मिला रहा है।

नवाब साहब फिरंगियों के भक्त हो रहे थे। उनके कई सलाहकार भी फिरंगी ही थे। दर्शनसिंह को यह सब नापसंद था। वह फिरंगियों

की सारी चालें समझते थे और उन्हें शासन-संबंधी मामलों के पास भी न फटकने देते थे।

उस दिन संध्या के समय नवाब साहब बादशाह बेगम के महल में थे।

बादशाह बेगम ने कहा, 'शायद हुजूर की तबियत इन दिनों कुछ नासाज रही है। चेहरा देखकर मुझे हद दर्जे का मलाल हो रहा है।'

कहते-कहते बेगम कुछ रुआसी हो गईं। नवाब साहब आराम से जड़ाऊ पलंग पर लेटते हुये बोले, 'ऐसी तो कोई बात नहीं है। हाँ, इधर कुछ हुकूमत की परेशानियाँ बढ़-सी गई हैं।'

मौक़ा पाकर बेगम बोलीं, 'दर्शनसिंह के बारे में हजरत का क्या खयाल है?'

नवाब साहब दो दिन पहले दर्शनसिंह के नाम से ही चिढ़ जाते थे, किंतु आज बोले, 'इसमें कोई शक नहीं कि दर्शनसिंह अवध का खैरख्वाह खादिम है। हम उनके बारे में कह ही क्या सकते हैं?'

निशाना चूकता देख बेगम बोलीं, 'हजरत का कहना ठीक ही होगा। सुना है, फिरंगियों को निहायत नापसंद करते हैं। क्या यह हजरत की तरक्क़ी के खिलाफ....'

नवाब साहब इस समय फिरंगियों से बुरी तरह चिढ़े हुए थे। बात काटकर बोले, 'आखिर यह हमारी समझ में अभी तक क्यों नहीं आता कि फिरंगी हमारे दोस्त हैं या दुश्मन।'

बेगम अब खुद चक्कर में पड़ी जा रही थीं। बोलीं, 'मैं समझ नहीं पाती कि फिरंगी हमारे दुश्मन क्योंकर हो सकते हैं। हजरत के साथ तो वे निहायत इज्जत के साथ पेश आते है।'

नवाब साहब बोले, 'समझ में तो मेरी भी नहीं आता। फिरंगी लोग निहायत बाअदब हैं, और मुझे अपना बादशाह ही समझते हैं।

लकिन लोगों का खयाल है कि ये लोग सलतनते अवध को मेरे खिलाफ भड़का रहे हैं।'

बेगम ने फिर चोट की, 'जहाँ तक मेरा ख़याल है, सिवा दर्शनसिंह के यह बात कोई नहीं कहता। मुझे तो इस हुकूमत में उनके अलावा और कोई ...'

बीच ही में नवाब साहब बोल उठे, 'तुम्हारा ख़याल ग़लत है बेगम! फिरंगी जो मेरे खिलाफ साजिश कर रहे हैं, उसका सुबूत मुझे और भी लोगों से मिला है।'

बेगम का मुँह उतर गया। वह धीरे से बोलीं, 'हुज़ूर को सही खबर मिली होगी। अगर ऐसी बात है, तो उस साजिश का पता लगा कर फिरंगियों को सजा देनी चाहिए। हुज़ूर पता लगा लें कि यह बात सही है या गलत। बेकार ही में तो इन फिरंगियों से दुश्मनी मोल लेना ठीक नहीं।'

'हूँ' कहकर नवाब साहब चुप हो गए। बेगम को आश्चर्य था कि अभी कल तक नवाब साहब स्वयं दर्शनसिंह से बहुत नाराज, थे लेकिन इधर कौन सी-ऐसा घटना हो गई, जो उनकी ओर से नवाब साहब का गुस्सा कम हो गया। वह चुप ही रहीं।

नवाब साहब थोड़ी देर बाद बोले, 'समझ नहीं पा रहा हूँ कि ये फिरंगी किस किमाश के लोग हैं। इधर दोस्ती का दम भरते हैं और उधर रियाया को मेरे ख़िलाफ़ भड़काते रहते हैं। अजब परेशानी की बात है।

मौक़ा पाकर फिर बेगम ने कहा, 'हज़रत ज़रूर परेशान हैं इन फिरंगियों के क़िस्से को लेकर मैं तो यह मुनासिब समझती हूँ कि इस मुआमिले की जल्दी ही छानबीन की जाय और अगर यह सही निकले, तो फिर..'

नवाब साहब को ग़ुस्सा आ रहा था कि क्यों बेगम इस समय इस

पचड़े को लेकर बैठ गईं। कुछ झल्लाकर बोले, 'कह तो दिया, समझकर काम करूँगा। इस वक़्त जितने भी यहाँ मुसाहिब हैं, सब-के-सब हरामखोर और कामचोर हैं। मैं सभी को निकाल बाहर करूँगा। चाहे दर्शनसिंह हो, चाहे मंसूरअली।'

नवाब साहब को कुछ झल्लाया-सा देख कर बेगम सहम गईं। आगे बोलने की उनकी हिम्मत न पड़ी। नवाब साहब ने अनुभव किया कि बेगम को कुछ बुरा लग गया है। बोले, 'तुम कुछ फिक्र मत करो मलिका! मैं जल्द ही सब ठीक कर लूँगा। सलतनत में झंझटें तो चलती ही रहती हैं। तुम बेकार में परेशान मत हो।'

अब बेगम बोलीं, 'हज़रत का साया रहते हुए मुझे कौन सी परेशानी हो सकती है। ख़ुदा जानता है कि आपको परेशान देखकर बीमार हो जाती हूँ। अल्लाह करे आपकी मुश्किलें आसान हों।'

नवाब साहब अब इस विषय पर बात करना न चाहते थे। बोले, इधर इमारत जो बन रही थी उसे, दर्शनसिंह ने यह कहकर रुकवा दी कि—

बेगम ज़रा ताव में आकर बोलीं, 'दर्शनसिंह की इतनी मजाल...'

नवाब साहब बोले, 'दर्शनसिंह इसमें बेक़ुसूर हैं। उनकी सिर्फ़ सलाह थी कि अभी कुछ दिनों के लिये यह काम मुलतवी रक्खा जाय। मैंने उनकी बात मान ली।

× × ×

'जरा धीरे से बात करो। हज़रत आज यहीं रौनक अफरोज हैं।'

फुसफुसाहट हुई, 'मगर बेगम साहिबा से मिलना ज़रूरी जो है। उन्होंने यहाँ इसी वक़्त हाज़िर होने का हुक्म दिया था। अब जैसे भी हो, उन्हें ख़बर पहुंचाना चाहिए।'

स्त्री का कंठ बोला, 'आप ठहरें। मैं कोशिश करती हूँ।'

अपने को लबादे से छिपाए एक मूर्ति चुपचाप खड़ी थी। बादशाह बेगम की बाँदी हसीना धीरे-धीरे पैर रखती हुई शयनागार की ओर चली।

नवाब साहब सो रहे थे। किंतु बादशाह बेगम परेशानियों में लेटी हुईं करवटें बदल रही थीं। वह बार-बार नजर उठाकर द्वार की ओर देख लेती थीं। उन्हें याद था कि आज उन्होंने मंसूर के द्वारा रेजीडेंट के प्रमुख अँगरेज़ अफसर को मिलने के लिये बुलाया था। उसे यह याद ही न रहा था कि आज नवाब साहब को उसके हरम में आना था।

हलकी-सी आवाज हुई और बेगम साहबा की नजर द्वार की ओर पहुँच गई। तभी हसीना ने धीरे से झाँककर अंदर की ओर देखा। बेगम साहब ने उसे इशारे से वहीं रोक दिया। हसीना का चेहरा फक हो गया।

बादशाह बेगम ने धीरे से ज़मीन पर क़दम रक्खे और सोते हुए नवाब साहब के मुँह की ओर देखा। नवाब साहब खुर्राटे ले रहे थे। बेगम आहिस्ता से बाहर हो गईं।

हसीना ने कान के पास मुँह ले जाकर कहा 'मलिकेजहाँ को मंसूर अली सलाम बजा रहे हैं।'

बेगम ने फुसफुसाकर कहा, 'उन्हें मेरे ख़ास कमरे में ले जाकर बिठा। मैं वहीं आ रही हूँ।'

हसीना बोली, 'उनके साथ में कोई एक फिरंगी··'

बेगम उसके गाल पर हलकी-सी चुटकी काटती हुई बोलीं, 'चुप रह बेवकूफ! अगर हज़रत के कान में यह आवाज़ पड़ गई, तो ग़ज़ब ही हो जायगा।'

हसीना चुपचाप चली गई। बेगम धीरे-धीरे पैर रखती हुई फिर कमरे में लौट आईं और सामने खड़े होकर सोते हुए नवाब सा ब के

मुंह की ओर देखने लगीं। दो मिनट तक कान लगाकर सुनती रहीं। फिर उसी तरह धीरे से क़दम बढ़ाती हुई कमरे से बाहर हो गईं।

बेगम साहबा का ख़ास कमरा शयनागार के बाद दो कमरे छोड़ कर था। वह आहिस्ता से पैर रखती हुईं वहाँ पहुँच गईं।

कमरे में दो व्यक्ति बैठे हुए उनका इंतज़ार कर रहे थे—उनमें एक था मंसूर अली और दूसरा था रेज़ीडेंट का एक प्रमुख अँगरेज अफसर स्मिथ। बेगम साहबा को देखते ही दोनो बाअदब उठकर खड़े हो गए। बेगम साहबा ने उन्हें बैठने की आज्ञा दी तथा स्वयं भी जड़ाऊ कुरसी पर बैठ गईं।

मंसूरअली ने कहा, 'मलिकेजहाँ के हुक्म की तामील हो गई। ये स्मिथ साहब आपके रूबरू हाज़िर हैं।'

बेगम ने गंभीर वाणी में कहा, 'हम अँगरेजों से दोस्ती का बर्ताव रखना चाहते हैं।'

स्मिथ ने अभिवादन करते हुए कहा, 'हमको मलिका साहिबा की दोस्ती पर फ़ख्र है। हम लोग नवाब साहब के ख़ैरख़्वाह हैं। कुछ लोग हमारा बुराई हुज़ूर से करता फिरता है। हम अपना फरियाद हुज़ूरेवाला के पास लेकर आया है। हमारे साथ इंसाफ होना चाहिए।'

मंसूर बोल उठा, 'मलिकेजहाँ, यह दर्शनसिंह बहुत खतरनाक आदमी है। उसने अंग्रेजों पर बाजार में जाने तक के लिये रोक लगा दी है। अगर कोई अँगरेज़ सिपाही बाजार में जाता है, तो उस पर पुलिस तैनात कर दी जाती है। यह तो बड़ी ख़राब बात है। इन लोगों के साथ इंसाफ होना चाहिए।'

बेगम साहबा ने कुछ सोचकर कहा, 'मैंने आज ही हज़रत से इसका जिक्र किया था। उन्होंने इंसाफ करने का वायदा किया है। आप परेशान न हों स्मिथ साहब! आप हमारी रियाया की तरह हमको अजीज हैं। आप लोगों पर से रोक हटा ली जायगी।'

स्मिथ ने फिर बड़े अदब के साथ अभिवादन किया।

मंसूर कहने लगा, 'अब जुल्म हद से आगे बढ़ गया है। दर्शनसिंह ने तो इसे बिल्कुल हिंदुओं की हुकूमत बना रक्खा है। ऐसा मालूम पड़ता है कि अवध से नवाबी बिल्कुल उठ ही गई है। मुआफ करें मलिकेजहाँ, मैंने सुना है कि, दर्शनसिंह मरहठों से मिले हुए हैं। अगर यही हाल रहा, तो यह तय है कि वह एक दिन अवध की सलतनत मरहठों को सौंप देंगे। जल्द ही इसका कुछ इलाज होना चाहिए।'

बेगम साहबा ने भेदभरी दृष्टि से मंसूर की ओर देखा। बेगम साहिबा का आशय समझते हुए मंसूर अली बोले, 'अगर बेगम साहिबा इजाज़त दें और स्मिथ साहब भी पसंद करें 'तो यह काम बड़ी ही आसानी से हो सकता है।'

बेगम साहबा बोलीं, 'वह क्या तरकीब है मंसूर साहब? मैं तुम्हें बेखौफ होकर कहने की इजाजत दे रही हूँ।'

मंसूरअली ने बड़ा पशोपेश दिखलाते हुए कहा, 'मगर डर लगता है हुजूर।'

बेगम साहिबा कहने लगीं, 'मैंने तुम्हें मुआफ़ी दी। तुम बेखटके जो चाहे सो कह सकते हो। मुझे यक़ीन है कि तुम जो कुछ भी कहोगे, वह हुकूमत और मालिकेजहाँ की बेहतरी के लिये ही होगा। कहो, क्या कहना चाहते हो?'

मंसूरअली ने धीरे से कहा, 'अगर दर्शनसिंह को गिरफतार कर लिया जाय, तो—'

बेगम साहबा फ़ौरन् बोल उठीं, 'यह नामुमकिन है मंसूर साहब यह बिल्कुल नामुमकिन हैं। दर्शनसिंह ने खुल्लमखुल्ला हुकूमत का कोई नुक़सान नहीं किया है। ऐसा करना उनके साथ बड़ी भारी बेइंसाफी होगी।'

मंसूरअली बोले, 'हुकूमत के खिलाफ़ उनकी यह साजिश क्या कम

है कि हमारे खिलाफ़ अँगरेजों को, जो इस सलतनत के ख़ैरख़्वाह हैं, उभाड़ा जा रहा है। इसके अलावा हिंदुओं को मुसलमानों के मुकाबले हर जगह तरजीह दी जा रही हैं। मैं तो यह समझता हूं कि —

बेगम साहबा बोल, 'मगर मालिकेजहां इस बात पर हरगिज राज़ी न होंगे। वे दर्शनसिंह को बहुत पसंद करते हैं।'

मंसूरअली ने कहा, 'मगर नवाब साहब को गुमराह किया गया है। मालिकेजहाँ तो सीधे-सच्चे आदमी हैं। वे दर्शनसिंह की चाल नही समझ सकते।'

बेगम साहिबा ने कहा, 'तुम्हारा कहना दुरुस्त है मंसूर अली, लेकिन मुझे इतमीनान है कि वे कभी ऐसा करने की इजाज़त न देंगे। फिर ऐसा करने से बड़ा झगड़ा उठ खड़ा हो सकता है।'

मंसूरअली एक लंबी सांस लेकर कहने लगा, 'तब फिर बिना इस शख़्श को रास्ते से हटाए सलतनत अवध की मुशकिलात कम न होगी।

बेगम क्षण भर रुक कर बोलीं, 'जब वे अँगरेजों के खिलाफ इतना ज़हर उगल रहे हैं, तो अंग्रेजों को खुद नवाब साहब से इस बात की शिकायत करना चाहिए।'

अब स्मिथ साहब बोले, 'और अगर हुज़ूर नवाब साहब ने फिर भी इस बात पर ग़ौर न किया तो हम कर ही क्या सकते हैं। तब तो दर्शनसिंह का हौसला और भी बढ़ जायगा। इस बात पर ग़ौर नहीं किया है आपने मलिकेजहां? हम लोग फिर और भी मुश्किल में पड़ जायँगे।'

सब लोग थोड़ी देर तक चुप रहे। फिर मंसूर अली ने कहा, 'तब एक तरकीब और हो सकती है।'

बेगम साहबा ने कहा, 'हाँ, वह भी बतलाइए। मैं जहाँ तक होगा, आपकी मदद करूंगी।'

मंसूर अली ने एक बार स्मिथ की ओर देखा और फिर थोड़ी-सी

टालमटोल के बाद धीरे से बोले, 'अगर दर्शनसिंह को चुपचाप कैद कर लिया जाय 'तो कैसा रहेगा ?'

बेगम साहबा ने कहा, 'मगर विना मालिके अवध के और कौन हिम्मत कर सकता है।'

मंसूर अली ने स्मिथ साहब की तरफ़ देखा और कहा, 'मेरी राय है कि स्मिथ साहब यह काम बड़ी आसानी से कर सकते हैं।'

बेगम साहबा ने मायूसी-सी प्रकट करते हुए कहा, 'मगर यह सब नामुमकिन है मंसूर अली।'

मंसूरअली ने स्मिथ की तरफ़ देखकर एक इशारा किया।

स्मिथ झट बोल उठा, 'सब कुछ हो सकता है मलिकेजहां ! सिर्फ आपकी इजाजत चाहिए !'

बेगम साहबा थोड़ी देर रुककर बोलीं, 'अगर ऐसा हो सके, तो मुझे तो अजहद ख़ुशी होगी। हम लोगों की परेशानियाँ आसानी से दूर हो जायँगी।'

स्मिथ बोला, 'मगर नवाब साहब को कब्जे में रखना जरूरी होगा। अगर उनको पता चल गया, तो बड़ी मुश्किल होगी। वरन् यह काम तो बड़ा ही आसान है।'

बेगम चुप रहीं। मंसूर अली कुछ सोचकर बोले, 'मेरी समझ में एक तदवीर आ रही है। अगले इतवार को शाहजादे की साल गिरह है। उस दिन हुज़ूर आपके महल में रहेंगे। आप उस दिन आसानी से उनकी मोहर दस्तयाब कर सकती हैं। झट दर्शनसिंह की गिरफ़्तारी का परवाना तैयार कर लिया जायगा।'

बेगम साहबा बड़े सोच में पड़ गईं। थोड़ी देर बाद बोलीं, 'यह तो आसान काम है। कहीं ऐसा न हो कि काम भी न बने और मुफ़्त की जिल्लत भी उठानी पड़े।'

स्मिथ बोला, 'आप फिकर न करें। हम लोग काम को अंजाम देना अच्छी तरह जानते हैं।'

बेगम साहबा बोलीं, 'तो मुझे यह मंज़ूर है।'

स्मिथ साहब मन-ही-मन प्रसन्नता को दबाते हुए बोले, 'मगर बेगम साहबा से गहरा इनाम……।'

एकाएक बेगम साहिबा का मुँह पीला पड़ गया। गले से एक चीख निकलते-निकलते रह गई।

दरवाजे पर त्यौरियाँ चढ़ाए हुए नवाब साहब खड़े हुए थे। उनकी आँखों से क्रोध की चिनगारियाँ निकल रही थीं।

[७]

जिस खूबसूरत-सी इमारत में आगामीर को नवाब साहब ने ठहराया था, उसी के दूसरे हिस्से में बड़ी शान व शौकत के साथ रशीदा के रहने का भी इंतिजाम कर दिया गया। नवाब साहब ने कासिम को एक अच्छी सी रकम देकर कहा, 'रशीदा मुझे बहुत पसंद है कासिम ! अब वह हमारे महल को ही रौनक अफ़रोज़ करेगी।'

कासिम अभिवादन करके खड़ा रहा। नवाब साहब बोले, 'तुमको अब आगे मेरे लिये कोई इंतजाम करने की जरूरत नहीं है। तुमको पांच सौ रुपया माहवार मिलेगा आज से।'

प्रसन्नता के मारे कासिम के पैर सीधे न पड़ रहे थे। वह बोला, 'हुजूर की नवाज़िश क्या कभी बंदा भूल सकता है।'

नवाब साहब बोले, 'एक बात और है कासिम ! तुम कभी भूलकर भी उससे मिलने की कोशिश न करना। यह मेरा हुक्म है।'

सिर झुकाकर कासिम बोला, 'बंदा तो हुक्म का ताबेदार है।'

नवाब साहब ने कहा, 'जाओ।'

कासिम सिर झुकाकर फ़ौरन् चला गया।

नवाब साहब ने रशीदा के पास जाकर कहा, 'आग़ामीर को तुम अपना दोस्त समझना रशीदा ! इस सलतनत में उसके बराबर मेरे कोई हमदर्द नहीं है।'

रशीदा ने सिर झुकाकर कहा, 'हुज़ूर का हुक्म सिर-माथे पर है आज से हुज़ूर मुझे उनका दोस्त ही पाएंगे। मगर······।'

नवाब साहब उसका मतलब समझकर बोले, 'हाँ, मैं समझ गया। यह बात भी बड़ी ज़रूरी है।

उन्होंने नौकर को आग़ामीर को वहीं बुलाने की आज्ञा दी। आग़ामीर फ़ौरन् हाज़िर हो गए।

उन्होंने बाअदब सलाम किया।

नवाब साहब मुस्किराकर बोले, 'आओ आगामीर !! इस सलतनत में मेरे दो ही दोस्त हैं—एक तो यह रशीदा बानू और दूसरे तुम।'

दोनों ने ही सिर झुका कर मंजूर किया। आगामीर बोले, 'हुज़ूर ने जो इज्ज़त हम लोगों को बख्शी है, वह काबिले रश्क है। हम लोग अपना फर्ज पूरी तरह अदा करेंगे।'

उठकर खड़े होते हुए नवाब साहब ने कहा, 'मैं चल रहा हूँ आगामीर। मुझे यक़ीन है, तुम लोगों का वक़्त सलाह-मशविरे में अच्छा कटेगा।'

नवाब साहब चले गए।

आग़ामीर ने रशीदा की ओर देखा। हुस्न की देवी, नवयौवना परी-सी।

वह देखते ही रह गए। रशीदा ने देखा एक, नौजवान, खूबसूरत, बांका और चुस्त। उसने नज़र नीची कर ली।

हंसकर आग़ामीर ने कहा, 'मेरे नए दोस्त ! मुझे इतमीनान है कि मेरा वक्त आपके साथ निहायत ख़ुशी के साथ कट सकेगा।

रशीदा कुछ मुस्किराकर बोली, 'ऐसा ही इतमीनान मुझे भी है। नवाब साहब ने आपकी जो तारीफ़ मुझसे की है, उससे मैं समझ सकी हूँ कि मैं एक निहायत शाइस्ता और पढ़े-लिखे शख़्श के साथ रहने का फ़ख़्र कर सकती हूँ। आपसे मिलकर मुझे निहायत ख़ुशी हुई है।'

आग़ामीर रशीदा की सुंदरता और बोली पर मुग्ध हो गए थे। वह उसे देखते ही रह गए। रशीदा ने इस प्रकार आग़ामीर को अपनी ओर देखते हुए कहा, 'यह नामुमकिन है कि जितनी ख़ुशी आपको मुझे देखकर, हुई है, उतनी मुझे न हुई हो लेकिन······।'

उसकी ओर उसी तरह ग़ौर से देखते हुए आग़ामीर ने कहा, 'आप हुस्न की परी हैं। अगर आप बुरा न मानें तो बानू, मैं कह सकता हूँ, कि आप सचमुच ही नवाब साहब का महल रौनक़ अफरोज करने लायक हैं।'

रशीदा समझ गई कि आग़ामीर उसे नवाब साहब की प्रेमिका मात्र समझ रहे हैं। वह बोली, 'नवाब साहब का महल रौनक़ अफ़रोज़ करने लायक़ मैं नहीं हूँ जनाब! इस ऊँचे मरतबे के लिये तो कोई ऊँचे मरतबे की औरत चाहिए। मैं तो एक निहायत मामूली औरत हूँ। यह तो नवाब साहब की क़द्रदानी है, जो मुझे अपना दोस्त बनाने लायक़ समझते हैं। आपने शायद मुझे ग़लत समझ लिया है।'

आग़ामीर कुछ आश्चर्य चकित होकर रशीदा की ओर देखते हुये बोले, 'मैं आपका मतलब नहीं समझा।'

कुछ मुस्किराकर रशीदा ने कहा, 'मैं नवाब साहब के महल में रहने लायक़ नहीं हूँ। नवाब साहब मुझे अपनी एक अदना-सी बेटी समझते हैं।'

'बेटी?' आग़ामीर के मुँह से निकला।

उसी प्रकार मुस्किराकर रशीदा ने कहा, 'हाँ, बेटी। क्या आपको इतमीनान नहीं होता? नवाब साहब ने इधर कुछ दिनों के अंदर अपने दो नए दोस्त बनाए हैं—एक तो मैं और शायद दूसरे मोतमुद्दौला आग़ामीर हैं। ठीक कह रही हूँ न?'

उसी प्रकार आश्चर्य के साथ उसकी ओर देखते हुए आग़ामीर ने कहा, मैं 'आपका मतलब नहीं समझा। अगर आप बुरा न मानें, तो

इसे ज़रा और खुलासा कर दें। मैं तो एक अदना-सा आदमी हूँ। यह नवाब साहब की नवाजिश है कि मुझे कुछ अपने काम का आदमी समझा और अपनी ख़िदमत में रख लिया।'

मुस्किराकर रशीदा ने कहा, 'मैं भी एक अदना सी औरत हूँ। नवाब साहब ने····।'

कुछ वेसब्री-सी ज़ाहिर करते हुए आग़ामीर ने कहा, 'आप सब कुछ खुलासा ही न कह दें रशीदा बानू? आख़िर इतने पास रहकर हम लोगों को एक दूसरे को समझ लेना भी तो चाहिए।'

रशीदा थोड़ी देर तक चुपचाप नीचा सिर किए हुए सोचती रही। आग़ामीर ने कहा, 'मैं आपको परेशान नहीं करना चाहता। अगर आप मुनासिब समझें·····।'

रशीदा ने अपनी कहानी आद्योपांत सुना दी। आगामीर गौर और आश्चर्य के साथ सुनते रहे। रशीदा ने कहा, 'अब तो आप सब कुछ सुन चुके। मुझे इतमीनान है कि आपने जो कुछ भी सुना है, उसे सच ही समझेंगे।'

आग़ामीर धीरे से बोले, 'वाक़ई यह सब सुनकर आपकी तारीफ़ किए बिना नहीं रह सकता। आप सचमुच एक बहुत ऊंचे दर्जे की औरत हैं। जिन ख़यालातों को लेकर मैं यहाँ तक पहुँच सका हूँ, मैं देखता हूँ, कि वे बरबाद न जायँगे। उनकी ताईद करने और समझने-वाला एक और इंसान इस लखनऊ में है। आज मैं बहुत खुश हूँ बानो! अब मैं सचमुच तुम्हारी तरफ़ दोस्ती का हाथ बढ़ाता हूँ।

कहते-कहते आग़ामीर ने अपना हाथ रशीदा की ओर बढ़ा दिया। रशीदा ने बड़ी प्रसन्नता से अपना हाथ बढ़ाकर आग़ामीर के हाथ पर रख दिया और कहा, 'हमारी दोस्ती मुबारक हो।,'

आग़ामीर ने धीरे से उसका हाथ दबा दिया। उसके स्पर्श से उसके हृदय में एक सिहरन-सी उत्पन्न हो गई। अपने भावों को अपने ही में

दबाते हुए वह बोले, 'हम दोनो मिलकर अब लखनऊ की बहबूदी के लिये कोई बहुत बड़ा काम करेंगे।'

रशीदा बानू ने कहा, 'मै तो आपके पीछे चलनेवाली एक सिपाही हूँ। आप जो हुक्म देंगे, उसे सरोचश्म बजा लाऊँगी। आप जो ठीक समझें, करें। मैं तो यह समझ रही हूँ कि अवध को हड़पने के लिये फिरंगियों ने अच्छा-ख़ासा जाल बिछा दिया है। हमको जल्द ही कोई ठोस क़दम इस तरफ़ उठाना होगा।'

कुछ गंभीर-से होकर आग़ामीर ने कहा, 'आप फ़िक्र न करें। अभी कुछ नहीं बिगड़ा है। हुकूमत का बोझ आजकल कुछ उन हराम-ख़ोरों और ग़द्दारों के कंधों पर है, जो नवाब साहब का सिर्फ़ जहाज़ ही ग़र्क़ नहीं कर देना चाहते, बल्कि इस मुल्क को हमेशा के लिये ग़ैर मुल्कवालों के हाथ बेच देना चाहते हैं।'

घबराकर रशीदा ने कहा, 'तब तो आप जल्द ही इसका इंतिज़ाम करें। ग़ुलामी के फंदे में जकड़ा हुआ मुल्क जल्दी आज़ाद नहीं होता। उसके लिये फिर बड़ी-बड़ी कुरबानियाँ करना पड़ती हैं। आप फ़ौरन् ही इन बातों की इत्तिला नवाब साहब को दे दें, जिससे इन ग़द्दारों को वाजिबी सज़ा दी जा सके और मुल्क को बे हाथ होने से बचाया जा सके।'

अब कुछ मुस्कुराकर आग़ामीर ने कहा, 'आप घबड़ाइए नहीं। ये मामले इतने मामूली नहीं हैं जितना आप इन्हें समझ रही हैं। जब तक हम कुछ करके नहीं दिखला देते, तब तक नवाब साहब ही हम पर क्यों यक़ीन लाने लगे।'

रशीदा बोल उठी, 'मैं जानती हूँ कि नवाब साहब को आप पर पूरा इतमीनान है। मैं समझती हूँ कि इस काम में आप कुछ देर कर रहे हैं।'

सिर हिलाते हुए आग़ामीर ने कहा, 'आप ठीक कह रही हैं, मगर

मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि जितनी आसानी से हम लोगों को यह इज्ज़त नवाब साहब की तरफ़ से हासिल हुई है, उतनी ही आसानी से यह जा सकती है। आप अभी बादशाहों और नवाबों को समझ नहीं पाई हैं।'

कह कर आग़ामीर हँसने लगे। रशीदा ने कुछ झुँझलाकर कहा, 'तब फिर मेरी तसल्ली के लिये लिल्लाह कुछ बताइए तो कि यह सब कैसे होगा? मेरा तो जी घबरा रहा है।'

आग़ामीर मुस्किराकर गंभीर हो गए और बोले, 'अगर रियाया हमारे साथ है, तो ज़िंदगी भर कोशिश करके भी फिरंगी हमारा कुछ बिगाड़ न सकेंगे। फिरंगी ख़ुद ही यह सब कुछ समझते हैं। अवध की सल्तनत को बचाने के लिये रियाया को अपनी तरफ़ मिलाना सबसे ज़रूरी है।

रशीदा बोली, 'मगर अवध की रियाया तो नवाब साहब पर जान देती है। फ़िरंगी शायद रियाया को भड़काने से कामयाबी हासिल न कर सकेंगे।'

मुस्किराकर आग़ामीर ने कहा, 'भोली-भाली बानो, तुम ठीक कह रही हो। मगर शायद तुमको नहीं मालूम कि कुछ ग़द्दारों की आवाज़ को भी रियाया की आवाज़ मानकर फ़ैसला दिया जाना सियासत में होता आया है। मग़रिब की यही पालिसी है। ये फिरंगी यहाँ कुछ ऐसा ही करना चाहते हैं। मैं अगर ग़लत नहीं समझा हूँ, तो लखनऊ में भी फिरंगी इसी तरह की एक चाल चल रहे हैं।'

रशीदा कुछ घबराती जा रही थी। कुछ ऊबकर तथा परेशान होकर बोली, 'तब आप क्या करने जा रहे हैं आग़ामीर साहब! मैं तो अभी तक कुछ समझ नहीं सकी हूँ।'

उसे अत्यंत स्नेह तथा प्रेम से देखते हुए कुछ मुस्किराकर आगामीर ने कहा, 'तब हम भी वही चाल क्यों न चलें, जो फिरंगी हमारे साथ चलना चाहते हैं।'

'यानी ?' रशीदा ने पूछा।

आग़ामीर गंभीर होकर बोले, 'हम रियाया की भलाई के लिये कुछ ऐसे काम करना शुरू कर दें, जो उसे पसंद आवें और फिरंगियों को बुरे लगें। इसका नतीजा यह होगा कि हमारी हुकूमत के ग़द्दार वज़ीर इस बहबूदी के काम को भी पसंद न करेंगे और उसको रोकना चाहेंगे। बस, हमारी और उनकी लड़ाई शुरू हो जायगी। इस तरह हम नवाब साहब के ज़्यादा नज़दीक हो जायँगे और फिरंगियों का सारा भंडा फूट जायगा।

एक लंबी साँस लेकर रशीदा ने कहा, 'मगर-मगर इन कामों में खासी देर लग जायगी। इधर फिरंगी......'

बात काटकर आग़ामीर बोले, 'हमको देर क्यों लगेगी ? वज़ीरों के पीछे अभी से हमारे आदमी लग गए हैं और उनके काले कारनामे नवाब साहब के सामने रोशन होना ही चाहते हैं। फिरंगी जल्द ही मुँह की खायँगे।'

रशीदा कुछ ख़ुश होती हुई बोली, 'यह तो सब ठीक है, लेकिन आप जल्द ही इन सब कामों का अंजाम दें। मैं आपके साथ कंधे-से कंधा मिला कर चलने को तैयार हूँ। सल्तनते अवध की हिफ़ाज़त के लिये मैं अपने को क़ुरबान करने के लिये तैयार हूँ।'

मुस्किराते हुए आग़ामीर ने कहा, 'मुझे पूरा इतमीनान है।'

दोनों चुप रहे। आग़ामीर बार-बार उसके सौंदर्य की ओर देख-कर मुग्ध हो जाते थे। अंत में वह धीरे से बोले—'आपका साथ पाकर मेरी काम करने की ताक़त दूनी बढ़ गई है। मुझे उम्मीद है, आप अपनी बातों से हमेशा मेरी हिम्मत अफजाई करती रहेंगी।'

रशीदा मुस्किराकर बोली—'कोरी हिम्मत बढ़ाने से तो मेरा फ़र्ज़ पूरा न हो जायगा। मुझसे और भी खिदमत लेते रहें आप।'

प्रेम और स्नेह की दृष्टि उस पर गड़ाते हुए आग़ामीर ने कहा—

'आपको देखने से ही जो हिम्मत अफजाई होगी उसे तो मैं इसी वक्त से समझने लगा हूँ। अभी और ज़्यादा कहने का,.....'

रशीदा ने मुस्किराकर अपनी दृष्टि नीची कर ली।

आग़ामीर कहने लगे–'एक-दो दिन के अंदर ही मैंने सारा इंतज़ाम कर दिया है, रशीदा। नवाब साहब के महल के अंदर ही इस व़क्त मेरे पाँच आदमी काम कर रहे हैं। फिरंगियों पर तो नज़र रक्खे ही हुए हूँ, साथ-ही-साथ घर के दुश्मन को ताकना उससे भी ज़ियादा ज़रूरी हो गया है।'

रशीदा ग़ौर से आग़ामीर का मुँह देखने लगी। आग़ामीर कहते गए, 'सबसे पहले नवाब साहब के वज़ीरों और साथी-संगियों के दिमाग सही करना पड़ेंगे। यही नहीं, उससे भी ज़्यादा ख़तर नाक हैं.....'

कहते-कहते वह रुक गए। रशीदा बोल उठी, 'आप रुक क्यों गए?'

आग़ामीर कहने लगे, 'जाने भी दो उस बात को। एक दिन सब कुछ खुलकर आगे आ जायगा। तुम देख और सुन कर हैरत में आ जाओगी।'

रशीदा सुनना चाहती थी, किंतु आग़ामीर को न कहते देखकर वह चुप ही रह गई। आग़ामीर बड़ी देर तक सोचते रहे, फिर बोले, 'ख़ैर, देख लिया जायगा। मैं तो रियाया की ख़िदमत करना चाहता हूँ। उसके लिये अगर मुझे जान भी देना पड़े, तो आगा-पीछा न करूँगा।'

[७]

नवाब साहब के नेत्रों से चिनगारियां निकल रही थीं। वह बोले, 'नमकहरामों! इस व़क्त-रात के वक्त मेरे ही महल में तुम लोग क्या साजिश कर रहे हो?'

मंसूरअली और स्मिथ दोनों ही सँभलकर खड़े हो गए।

नवाब साहब ने पीछे घूमकर किसी को आवाज़ देना चाही, किंतु तभी मंसूरअली तथा स्मिथ ने अपनी-अपनी पिस्तौलें नवाब साहब पर

तान दीं, और कहा, 'हाथ ऊपर कीजिए, नवाब साहब ! आपकी हुकूमत खत्म हो गई।'

नवाब साहब ने और कुछ चारा न देखकर हाथ ऊपर उठा दिए तथा मंसूरअली की ओर दांत पीसते हुए कहा, 'नमकहराम, आज तेरी सारी कलई खुल गई, तू हमेशा दर्शनसिंह की चुग़ली खाया करता था।'

मुस्किराकर मंसूरअली ने कहा, 'अब रोने-धोने और गाली देने से काम न चलेगा नवाब साहब ! कंपनी का जेलख़ाना आपकी राह देख रहा है।'

बादशाह बेगम का चेहरा उड़ा हुआ था। वह गिड़गिड़ाकर मंसूर अली से बोलीं, 'यह सब तुम क्या कह रहे हो, मंसूर अली। तुम इस तरह का धोखा देकर....'

मुस्किराता हुआ मंसूर बोला, 'मुआफ कीजिएगा बेगम साहबा। आपको कंपनी सरकार अच्छी-ख़ासी पेंशन देगी।'

मंसूर की ओर बढ़ते हुये बादशाह बेगम ने कहा, 'मुझे पेंशन नहीं चाहिए, मंसूर ख़ुदा के लिये तुम मालिके-अवध को छोड़कर चले जाओ।'

एक ठहाका लगाते हुए मंसूर अली ने कहा, 'नवाब साहब को अब भूल जाइए बेगम साहिबा ! इस हिंदू-परस्त को अब अंगरेजों की ही मेहरबानी पर ज़िंदा रहना पड़ेगा।'

बेगम साहिबा क्रोध से लाल हो गईं। उन्होंने भरपूर ताक़त से एक घूंसा मंसूर अली के उस हाथ पर मारा, जिसमें पिस्तौल थी। पिस्तौल छूटकर दूर जा गिरी। बेगम उसे उठाने के लिये झपटीं, किंतु वह दौड़-कर बेगम पर टूट पड़ा। धींगामुश्ती में पिस्तौल फिर मंसूर के हाथों में आ गई।

बेगम साहिबा पर पिस्तौल तान कर हांफता हुआ मंसूर बोला, 'वहीं चुपचाप खड़ी रहिए बेगम साहिबा, नहीं तो..'

बेगम गिड़गिड़ाकर बोलीं, 'रहम करो, रहम करो मंसूर। मेरे आका को—मेरे आका को—'

अब तक नवाब साहब चुप खड़े थे। बोले, 'और तुम बेगम ? मैं तुम्हारी ख़ाविन्द-परस्ती की दाद देता हूँ। क्या इसलिये इन हरामख़ोरों को इतनी रात में अपने महल में इकट्ठा किया था ?'

बेगम साहबा का बुरा हाल था। नवाब साहब के पैरों पर गिरती हुई बोलीं, 'तुम ग़लत समझ रहे हो मेरे आका—तुम ग़लत मत ससझो मुझे। यह नमकहराम मंसूर ही मुझे इतने दिनों से गुमराह कर रहा था। मैं बेक़सूर हैं।'

तभी बीच में स्मिथ बिगड़कर बोला—'ले चलो मंसूर साहब नवाब को जल्दी से। देर हो जाने से हम मुसीबत में पड़ सकता है।'

मंसूर ने नवाब साहब की ओर मुँह घुमाकर कहा, 'चलिए हुज़ूर नवाव साहब। अब तशरीफ ले चलिए।'

वादशाह बेगम और अधिक सहन न कर सकीं। वह बेहोश होकर वहीं फ़र्श पर गिर पड़ीं।

दोनो ओर पिस्तौलों से घिरे हुए नवाब साहब द्वार की ओर चले।

महल में चारो ओर सन्नाटा था। स्मिथ और मंसूर जिस गुप्त रास्ते से आए थे, उसी रास्ते से नवाब साहब को क़ैदियों की भाँति लिए हुए बाहर जा रहे थे। बहुत जल्द ही वे महल के फाटक के बाहर होकर एक सुनसान सड़क पर आ गए। कहीं पर कोई पहरेदार नज़र न आया। कदाचित् स्मिथ के पैसों ने सभी को ख़रीद लिया था।

सड़क पर थोड़ी दूर चलने के वाद नवाब साहब बोले—'आख़िर आप लोग मुझे लिए कहाँ जा रहे हैं ?'

स्मिथ बोला—'हम आपको कंपनी के एजेंट साहब बहादुर के पास ले चलेगा।'

क्षण-भर चुप रहकर नवाब साहब बोले, 'मगर मेरा क़ुसूर ?'

स्मिथ साहब बोले—'क़ुसूर की वात हम नहीं जानता। सारी रैयत आपकी हुकूमत से परेशान है। कंपनी आपको पेंशन देगा।'

नवाब साहब चुप हो गए। ज़िंदगी में इतनी बेइज्ज़ती, जिल्लत और परेशानी नवाब साहब कभी कल्पना में भी न ला सके थे।

तीनों एक निश्चत स्थान पर पहुँचे। वहाँ एक वृक्ष की आड़ में एक घोड़ा-गाड़ी खड़ी हुई थी। उसके निकट पहुँचकर मंसूर ने कहा—'हुज़ूर अब इसके अंदर तशरीफ ले चलें। आज से अवध पर आपकी हुकूमत ख़त्म हो गई।'

नवाब साहब ने एक निःश्वास ली और धीरे से गाड़ी के अंदर चले गए। आज उनका सब कुछ समाप्त हो गया था, हुकूमत, वतन, घर-द्वार, ऐशोइशरत, सब कुछ, सभी कुछ। इस वक़्त नवाब साहब को ईश्वर की याद आई। उनके मुँह से निकल गया 'या मेरे अल्लाह! तुम्हीं मालिक हो।'

स्मिथ और मंसूर भी गाड़ी के अंदर जाकर बैठ गए। कोचवान को गाड़ी बढ़ाने की आज्ञा दी गई। अवध के बादशाह को केवल दो व्यक्तियों ने बंदी बना लिया था।

किंतु—

गाड़ी दो क़दम भी आगे न बढ़ पाई थी कि एकाएक एक ओर से नंगी तलवारें लिए दस जवानों ने आकर गाड़ी को चारो तरफ़ से घेर लिया। दो-तीन जवानों के हाथों में पिस्तौलें तनी हुई थीं।

गाड़ी रुकती देखकर स्मिथ ने सिर बाहर निकाला, त्यों ही दो जवानों ने अपनी पिस्तौलें उस पर तान दीं और बोले—'चुपचाप दोनो हाथ ऊपर उठाओ। ख़बरदार, जो पिस्तौल निकालने की कोशिश की।'

स्मिथ और मंसूर ने गाड़ी में बैठे-बैठे अपने हाथ ऊपर उठा दिए। जवान ने कड़ककर कहा—'गाड़ी से बाहर निकलो।'

दोनो चुपचाप गाड़ी के बाहर आ गए। उनके पिस्तौलें छीन ली गईं तथा दोनो के हाथ कसकर पीछे की ओर बांध दिए गए।

नवाब साहब प्रसन्नता से विभोर थे। उनके कंठ से बोल भी न निकल रहा था, फिर भी उनके मुँह से निकला—'ऐ मेरे मेहरबानो···'

सरदार ने बड़ी शिष्ट वाणी में कहा—'हुज़ूर इसी गाड़ी में बैठकर महल में तशरीफ ले जायें। अब डर की कोई बात नहीं है। इस गुस्ताख़ी के लिये हम मुआफ़ी के ख़्वास्तगार हैं।'

उसने अपने साथियों से घूमकर कहा—'इन दोनो बेईमानो को जेल-खाने पहुँचा दो। कल मालिके-अवध के दरबार में इनकी किस्मत का फ़ैसला किया जायगा।'

सरदार नवाब साहब के साथ ही गाड़ी पर बैठ गया और कड़ककर कोचवान से कहा—'महल की तरफ़ ले चल।'

गाड़ी महल की ओर जाने लगी। महल के बहुत ही निकट पहुँच कर सरदार ने गाड़ी रुकवा दी। कोचवान से कहा—'नवाब साहब को फाटक तक पहुँचाओ।'

नवाब साहब के हाथ में एक पिस्तौल देते हुए सरदार ने कहा—'अब मैं जा रहा हूँ जहाँपनाह। अल्लाह आपकी मदद करे।'

नवाब साहब ने प्रेम से उसका हाथ पकड़ लिया और गद्‌गद वाणी में कहा—'मेरी जान व इज़्ज़त बचानेवाले मेरे दोस्त, आख़िर तुम कौन हो ?'

सरदार ने धीरे से अपना हाथ छुड़ाते हुए कहा—'हुज़ूर परेशान न हों। मैं आपकी रियाया ही नहीं, आपकी तनख़्वाह पाने वाला एक अदना-सा गुलाम हूँ। मेरा कोई एहसान हुज़ूर पर नहीं है। मैंने तो सिर्फ अपना फर्ज ही अदा किया है।'

कहते-कहते उसने अपने चेहरे की नकाब उलट दी।

नवाब साहब खुशी से चिल्ला पड़े—'तुम ? आग़ामीर।'

आग़ामीर रुके नहीं। नवाब साहब को अभिवादन करके जल्दी-जल्दी क़दम बढ़ाते हुए एक ओर को चले गए।

अब तक रात्रि का सन्नाटा उसी तरह छाया हुआ था। राजमहल की दुनिया अब भी सो रही थी। फाटक पर अब भी कोई पहरेदार न था। आज की इस घटना ने नवाब साहब को किंकर्तव्यविमूढ़ बना दिया था। वह महल में प्रवेश कर उसी कमरे में पहुँच गए, जहाँ अभी कुछ देर पहले ही इतनी बड़ी घटना हो गई थी। देखा कि बादशाह बेगम उसी प्रकार अचेतनावस्था में फ़र्श पर पड़ी हुई थीं। नवाब साहब थोड़ी देर तक चुपचाप खड़े रहे, फिर कमरे के बाहर हो गए। अपने कमरे में शाही पलँग पर लेटकर वह सारी घटनाओं पर विचार करने लगे।

[८]

नवाब साहब की आज्ञा से मंसूर अली को प्राण-दंड दिया गया। आज ही एक लंबे-चौड़े विस्तृत मैदान में लाखों दर्शकों के सामने उसे जीवित ही आधा ज़मीन में गाड़ दिया जायगा तथा उस पर जंगली कुत्तों को छोड़ दिया जायगा। देश-द्रोही को इससे कम क्या सजा दी जाय? प्राण-दंड की यह बर्बर प्रथा पढ़कर आज रोमांच हो आता है; किंतु उन दिनों इस प्रकार के दंड जनता को भयभीत करने के लिये भी दिए जाते थे।

स्मिथ को दंड देने का अधिकार नवाब साहब को न था। उसे अवध के पोलिटिकल एजेंट के पास भिजवा दिया गया। एजेंट ने इस अपराध के लिये नवाब साहब से क्षमा याचनाकर ली। एक ही अपराध के दो अपराधी हैं। एक को भीषण यंत्रणा के साथ आज मृत्यु का आलिंगन करना पड़ रहा है तथा दूसरा आनंद के साथ सजे सजाए कमरे में बैठा हुआ भोजन और मदिरा का आनंद ले रहा है।

नवाब साहब सबेरे सोकर उठे हैं। बादशाह बेगम ने अपनी मीठी-मीठी बातों से अपनी ग़ल्ती स्वीकार करके नवाब साहब से क्षमा प्राप्त कर ली है। नवाब साहब उन्हीं के भवन में हैं।

बादशाह बेगम नवाब साहब से कुछ कहना ही चाहती थीं कि सेवक ने आकर सूचना दी—'जनाब आग़ामीर मालिके-अवध से मिलना चाहते हैं ।'

नवाब साहब इस समय आराम करना चाहते थे । बोले–'आग़ामीर ! इस वक़्त क्या काम हो सकता है मुझसे ?'

बादशाह बेगम बोल उठीं—'ये आग़ामीर कौन हैं ? मैंने तो इस नाम के शख्स को पहले कभी नहीं देखा ।'

नवाब साहब इस प्रश्न पर मौन रहना चाहते थे । बोले—'अवध के एक नए मुलाज़िम हैं आग़ामीर । इमारतों के काम में बड़े माहिर हैं ।'

कुछ सोचकर सेवक से बोले—'उन्हें यहाँ आने की इजजत है ।'

सेवक चला गया । बादशाह बेगम ने कहा, 'आजकल की हवा अच्छी नहीं है मालिकेजहाँ । किसी भी शख़्स पर इतमीनान करना ख़तरे से ख़ाली नहीं है ।

नवाब साहब के मुँह से निकल पड़ा, 'मगर आग़ामीर उन शख्शों में नहीं हैं । मैंने तो उन्हें....'

कहते-कहते वह चुप हो गए । बादशाह बेगम समझ रही थीं कि आग़ामीर ने नवाब साहब के मन पर अवश्य ही अपना सिक्का जमा लिया है । वह कहने लगीं, 'आग़ामीर कब, हुज़ूर की....

तभी आग़ामीर ने आकर आदाब किया । उन्हें स्नेह से बिठलाते हुए नवाब साहब ने कहा, 'कहो आगामीर, आज सवेरे से ही ऐसी क्या ज़रूरत महसूस हुई....'

आग़ामीर ने उलटती दृष्टि से बादशाह बेगम की ओर देखा और कहा, 'मालिकेजहाँ से कुछ तख़लिये में अर्ज़ करना चाहता हूँ ।'

नवाब साहब फ़ौरन् बोल उठे, 'हो-हो, यहाँ तखलिया ही है । तुम बेखटके कह सकते हो ।'

आग़ामीर चुप रहे। बादशाह बेगम समझ रही थीं कि आग़ामीर उनके सामने बात नहीं करना चाहते। वह कुछ खिसिया गई।

नवाब साहब ने फिर कहा, 'कहो आग़ामीर, जो कुछ कहना चाहते हो।'

कुछ सोच कर आग़ामीर ने कहा, 'हुज़ूर ने मंसूरअली को सजाये मौत दी है। मुझे उसी बारे में कुछ अर्ज करना है।'

नवाब साहब की त्यौरियाँ चढ़ गईं। वह स्फुटस्वर में बोले, 'उसे कुत्तों की मौत मरना पड़ेगा। मैं उसे किसी हालत में मुआफ़ नहीं कर सकता।'

आग़ामीर कुछ कहना चाहते थे, किंतु बादशाह बेगम बीच ही में बोल उठीं, 'मंसूर अली को आज ही मरना पड़ेगा। उसे किसी तरह की भी मुआफ़ी नहीं मिल सकती।'

आग़ामीर के चेहरे पर रोष की रेखा खिंच गई। वह कुछ स्फुट स्वर में बोले, 'मैं मंसूर अली की जाँ बख़्शी के लिये हुजूर से दरख़्वास्त करने नहीं आया हूँ, ऐसे गद्दार को तो सज़ायेमौत से कम कुछ मिलना भी न चाहिए।'

नवाब साहब का रुख़ बदल गया। वह आग़ामीर को अच्छी तरह से परख चुके थे। ज़रा नरम पड़ते हुए बोले, 'मैं तुम्हें समझाता हूँ आग़ामीर तुम्हारा सा वतन-परस्त अवध को बड़ी मुश्किल से नसीब होता है। तुम जो कुछ कहना चाहते हो, बाख़ुशी कह सकते हो।'

आग़ामीर कहने लगे, 'दुनिया तरक़्क़ी की तरफ़ क़दम बढ़ा रही है। इनसानियत एक दिन सबसे ऊपर आकर ही रहेगी। इनसानियत के नाम पर हमको अपने तौर व तरीक़े भी बदलने पड़ेंगे।'

नवाब साहब कह पड़े, 'बेशक तुम्हारी बात वजन रखती है, आगामीर! हमको दुनिया के साथ चलना पड़ेगा।'

कुछ देर चुप रहकर आग़ामीर बोले, 'बस' मैं जहाँपनाह से यही इल्तिजा करने आया हूँ।'

नवाब साहब आग़ामीर की बात समझे नहीं। बोले, 'मगर मंसूर अली के लिये—'

आग़ामीर ने कहा, 'मैं हुज़ूर से पहले ही अर्ज़ कर चुका हूँ कि मैं मंसूर अली की जाँ बख़्शी के लिये दरख़्वास्त करने नहीं आया हूँ।'

कुछ झल्लाकर नवाब साहब ने कहा, 'तुम कहना क्या चाहते हो आग़ामीर ?'

आग़ामीर बोले, 'हुज़ूर ने इस आग़ामीर को जितनी इज़्ज़त बख़्शी है, वह कम नहीं, मगर जहाँपनाह के इंसाफ और इन्सानियत की तूती बोले, यह मेरे सामने एक अहम सवाल है।'

नवाब साहब ज़रा नरमी से बोले, 'मैं जानता हूँ कि तुम मेरी इज़्ज़त और शान के लिये अपनी जान क़ुरबान करने में भी आगा-पीछा नहीं कर सकते। मगर इस मंसूर अली की निस्बत तुम क्या कहना चाहते हो, मैं फ़ौरन् जानना चाहता हूँ।'

आग़ामीर ने कहा, 'मैं मंसूर अली की सजाए मौत में कोई तरमीम नहीं चाहता। यह चाहता हूँ कि हम इंसानियत के दायरे के अंदर रहकर ही यह सब करें।'

'यानी ?' नवाब साहब ने पूछा।

आग़ामीर ने कहा, 'जहाँपनाह ने जिस ढंग से मंसूर अली को मौत के घाट उतारने का हुक्म दिया है, वह इंसानियत के ख़िलाफ़ है। मंसूर अली अवध के एक ऊँचे ओहदेदार हैं। उनका सिर तलवार से उतार लेना चाहिए या गोली मार देना चाहिए। इंसान को कुत्तों से नुचवाकर मरवाना ख़ुद इन्सानियत की तौहीन है।'

नवाब साहब कुछ सोचने लगे। बादशाह बेगम बीच ही में बोल उठीं, 'मंसूर अली ज़लील आदमी है। उसने हज़रत को जलील किया है। उसे कुत्तों की मौत ही मरना पड़ेगा।'

आगामीर बोले, 'मंसूर अली कुत्ते से भी ज़्यादा ज़लील है, मलिके आलिया ! उसने ग़द्दारी की है। उसे सजाएमौत मिलना चाहिए। मगर हम तो इन्सान हैं। मंसूर की तरह हमको हैवान न होना चाहिए।'

बादशाह बेगम को आग़ामीर की बातों पर ग़ुस्सा आ रहा था। बोलीं। मगर मलिके-अवध के हुक्म को हैवानियत से भरा बतलाना सबसे बड़ी गुस्ताख़ी है आग़ामीर।'

आग़ामीर कुछ उत्तर देना चाहते थे, किंतु नवाब साहब बीच ही में बोल उठे, 'आग़ामीर ठीक कह रहे हैं मलिका ! अब सचमुच हमको इन्सान बनना है। मैं आग़ामीर की अक़्ल की तारीफ करता हूँ। मंसूर अली को दी हुई सज़ा मैं मंसूख़ करता हूँ। उसको आज ही गोली से उड़ा देने का दूसरा हुक्म जारी करूँगा।'

बादशाह बेगम खिसिया गईं। आग़ामीर ने अत्यंत गंभीर होकर अभिवादन किया।

नवाब साहब ने फ़ौरन् नया परवाना लिखकर आग़ामीर के सिपुर्द कर दिया।

नवाब साहब बोले, 'यह परवाना तुम्हीं को ले जाकर तामिल करना है आग़ामीर।'

आग़ामीर ने सिर झुकाकर फिर अभिवादन किया। वह बोले, 'जहांपनाह के हुक्म की तामील होगी।'

नवाब साहब प्रसन्न होकर बोले, 'तुम हमारी सलतनत की शान हो आग़ामीर। तुमने मेरे सामने इस वक्त एक बहुत ऊंचा सुझाव रखकर मुझे बहुत ऊँचा कर दिया है। एक काम तुमको और सौंपता हूँ आग़ामीर। जिन बहादुर और जवाँ मर्द इंसानों ने उस दिन ठीक मौक़े पर पहुंचकर मुझे इन नामाकूलों के फंदे से आज़ाद किया, मैं उन्हें इनाम अता करना चाहता हूँ। उन्हें मुह मांगा इनाम दिया जाय।'

आगा.मीर ने सिर झुकाकर कहा, 'जहाँपनाह का हुक्म सर-आंखों पर। मैं उन्हें वक़्त आने पर हुज़ूर के सामने पेश कर दूँगा।'

बेगम आश्चर्य के साथ आग़ामीर के मुँह की ओर देखती रह गईं।

चलते हुए आग़ामीर ने कहा, 'मुझे जाने की इजाज़त मिले आली-जाह; जिससे मैं ठीक वक़्त पर पहुँचकर उस ज़लील काम को रोक सकूँ।'

आगामीर चले गए।

उनके जाने के बाद नवाब साहब कुछ देर तक सोचते रहे, फिर उनके मुँह से निकला, 'यह शख्श अवध का वज़ीरे आज़म होने लायक़ है।'

बेगम नवाब साहब के मुँह की ओर देखती रह गईं।

[९]

रशीदा गंभीर शब्दों में बोली, 'तो यह बात है। मुझे तो अवध के अंदर जल्द ही कोई नया गुल खिलता नजर आ रहा है।'

आग़ामीर कहने लगे, 'मेरा भी यही ख़याल है रशीदा! दर्शनसिंह को छोड़कर रियासत का एक भी ऐसा मुलाज़िम नहीं है, जो नवाब साहब का वफ़ादार हो। उसी दर्शनसिंह को सभी नीचा दिखलाने की फ़िक्र में हैं। सबसे ज़्यादा ख़तरनाक हैं हमारी मलिके आलिया बादशाह बेगम। मैं उन्हें ग़द्दार नहीं कहता। मगर अपनी बेवक़ूफ़ियों से वह इन फिरंगियों को नवाब साहब का सच्चा दोस्त समझ बैठी हैं। नमकहरामों और चापलूसों को वह वफ़ादार समझ बैठी हैं। नवाब साहब कोई भी सियासी बात उनसे छिपाते नहीं हैं। यही एक परेशानी की बात है। फिरंगियों का जाल दिन ब दिन अवध को अपने गिरफ़्त में फँसाता जा रहा है।'

कुछ सोचकर रशीदा ने कहा, 'तो फिर आप नवाब साहब से एक दिन खुलासा सब कुछ कह क्यों नहीं देते।'

गंभीर होकर आग़ामीर ने कहा, 'भोले भाले नवाब साहब इन सियासी चालों को समझ नहीं पाते। मैं जब भी उनसे बात करने जाता हूँ बेगम साहब साये की तरह उनके इर्द-गिर्द लगी रहती हैं।'

थोड़ी देर तक दोनों चुप रहे, फिर रशीदा बोली, 'आखिर इस जाती हुई सलतनत को बचाने के लिये हमको कुछ-न-कुछ तो करना ही पड़ेगा।'

कुछ सोच कर आग़ामीर ने कहा, 'कुछ भी मुमकिन नहीं जानों, जब तक हज़रत को एक शख्श के फंदे से आज़ाद न किया जाय।'

किंचित आश्चर्य के साथ रशीदा ने पूछा, 'वह कौन? वह कौन है आग़ामीर साहब?'

आग़ामीर ने कहा, 'वह हैं हमारी बादशाह बेगम। इस औरत पर मैं किसी भी तरह का यक़ीन लाने को तैयार नहीं हूँ। मगर-मगर—'

आग़ामीर बेचैनी के साथ टहलने लगे। रशीदा आश्चर्य के साथ उनका मुँह देख रही थी। आग़ामीर कहने लगे, 'लेकिन इस औरत को रास्ते से हटाना नामुमकिन है; मेरी ताक़त से बाहर की बात है। नवाब साहब पर उसका गद्दार रंग चढ़ा हुआ है। मुझे ताअजुब है कि इतने बड़े हादसे के बाद अब भी नवाब साहब उसकी इज़्ज़त करते हैं; उसका यक़ीन करते हैं।'

रशीदा एक सांस लेकर बोली, 'आप ठीक कह रहे है, लेकिन आपका रंग भी कुछ मामूली नहीं है आग़ामीर साहब।'

आग़ामीर को हँसी आ गई। बोले, 'कहीं आप पर भी तो मेरा रंग नहीं चढ़ने लगा।'

रशीदा कुछ मुसकरा कर बोली, 'आपका रंग और बिना चढ़े रह जाय? मुमकिन नहीं।'

मुसकराकर आग़ामीर बोले, 'यह जान कर मुझे अजहद खुशी हुई है; बात ठीक है न?

रशीदा के चेहरे पर कुछ लाली दौड़ गई वह बोली 'आपका रंग किस पर नहीं चढ़ता। मैं-मैं तो—'

आग़ामीर ने मौज में आकर धीरे से उसका हाथ पकड़ लिया और बोले, 'क्या वह सच है बानो ? मैंने तो कभी अपने को इस लायक नहीं समझा।'

अपना हाथ छुड़ाते हुए रशीदा ने कहा, 'जाओ, मैं यह सब कुछ नहीं जानती।'

आग़ामीर मुसकराते हुए बोले, मैं औरतों के लिए पत्थर की मानिंद हूँ, किंतु तुम में न जाने क्या बात है, कि मैं—अब मैं कुछ आगे नहीं कह सकता।'

रशीदा नीचा सिर कर के चुप होगई। थोड़ी देर तक आग़ामीर उसकी ओर देखते रहे फिर बोले, 'लेकिन यह वक़्त इन सब बातों का नहीं है। हमारे सामने इस वक़्त मसला पेश है मुल्क का। हमको कुछ करके दिखलाना है, रशीदा। समझ में नहीं आता कि —

रशीदा बोल उठी, 'मंसूर अली की सज़ाये मौत का आज ही तो दिन है न ? आज ही उसे कुत्तों की मौत मरना है, आग़ामीर साहब ?

आग़ामीर बोले—'हो, मगर मैंने हज़रत से कह कर उसे आदमी की मौत मरने के लिये छुड़वा दिया है। उसे अब गोली मारी जायगी।'

किंचित आश्चर्य के साथ रशीदा ने कहा,—'मगर आपने ऐसा क्यों किया ? ऐसे ज़लील आदमी को तो कुत्तों की ही मौत मरना चाहिये था।'

आग़ामीर गंभीर होकर बोले—'मंसूर अली ज़लील है तो क्या हुआ, हम तो इंसान हैं। मौत से बड़ी और कौन सी सज़ा इंसान के लिये हो सकती है। उसके मरने का तरीक़ा आज इंसान को चुनना है। हम हैवानियत कैसे अख़्तियार कर सकते हैं। अब तुम समझ गई रशीदा ?'

रशीदा ने धीरे से कहा,—'मैं आपकी इस ऊँचे पैमाने वाली बात समझ रही हूँ।'

आग़ामीर कहने लगे,—'किसी को मारना या जिलाना ख़ुदा का काम है। एक इंसान को दूसरे इंसान को मारने का क्या हक़ है। आखिर हम इंसान हैं। यह काम तो दरिंदों का है।'

रशीदा पूछ बैठी—'तब आपकी राय से सज़ाये मौत किसी को मिलना ही न चाहिये। यही न?'

आग़ामीर ने कहा,—'बेशक। एक दिन दुनिया से सज़ाये मौत उठ कर ही रहेगी। यही इंसानियत है। दुनियां ज्यों-ज्यों इंसानियत की तरफ बढ़ेगी। त्यों-त्यों उसे हैवानियत के तरीकों को छोड़ना ही पड़ेगा।'

रशीदा आग़ामीर का मुँह ताकती रह गई। वह समझ ही न पा रही थी कि आखिर आग़ामीर के विचारों की उच्चता किस युग से टक्कर लेना चाहती हैं? वह चुप रही।

आग़ामीर थोड़ी देर चुप रह कर बोले,—'आज की दुनिया अमीरों की दुनिया है। अमीरों की दुनिया में औसत दरजे और गरीब आदमियों की कोई हस्ती नहीं। अमीर-गरीब को इंसान मानने के लिये तैयार नहीं। यह भी कोई दुनिया है? जिस दिन अमीर-गरीबों के लिये कुछ महसूस करने लगेंगे उसी दिन से दुनिया में इनक़िलाब शुरू हो जायगा।'

रशीदा बोली—'मगर अमीर ऐसा क्यों करेंगे?

ज़रा स्फुट स्वर में आग़ामीर ने कहा,—'उन्हें तो मजबूरन ऐसा करना पड़ेगा। जो मेहनत और मशक्कत करता है उसे आराम करने का भी हक़ है। हम मेहनत करके मुल्क की दौलत बढ़ाते हैं, आख़िर उस दौलत में हमारा भी तो वाजिबी हिस्सा होना चाहिये।'

रशीदा बोली,—'वाजिबी हिस्से से आपका मतलब?'

आगामीर कहने लगे,—'उतना हिस्सा जिसमें हम ख़ुशी के साथ खा सकें, रह सकें और अपने बच्चों की परवरिश कर सकें। यह कहाँ का इंसाफ है कि एक इंसान शराब के दौर में डूबा रहे, दौलत को अपने ऐशो आराम में फूंकें और दूसरा इंसान दिन भर मेहनत और मशक़्क़त के बाद भी भूखा और फटे हाल रहे, अपने बच्चों को न पेट भर खिला सके और न उन्हें कपड़े पिन्हा सके। आखिर इन अमीरों को अमीर बनाया किसने ?'

रशीदा बोली—'यह तो ख़ुदा की मर्ज़ी है। वह किसी को कम देता है और किसी को ज़ियादा। यह बात इंसान के हाथ में थोड़ा ही है।'

ज़रा जोश में आकर आग़ामीर ने कहा—'यह बात बिल्कुल ग़लत है। अगर ख़ुदा का यही इंसाफ है तो मैं ऐसे ख़ुदा को मानने के लिये तैयार नहीं हूँ। मैं उसके ख़िलाफ बग़ावत करूँगा। चाहे दुनिया मुझे काफ़िर ही क्यों न समझ ले।'

रशीदा चुप रही। आग़ामीर कहते गए,—'मेरा तो यह कहना है कि मंसूर अली को इस वक़्त सज़ाये मौत भी देना नवाब साहब की एक बहुत बड़ी सियासी भूल होगी।'

आश्चर्य प्रकट करते हुये रशीदा ने कहा,—'इसका मतलब मैं नहीं समझी।'

आग़ामीर ने एक ठहाका लगाया और कहा,—'मेरा दिमाग न जाने कितनी उलटी-सीधी बातें सोचता रहता है। आखिर मंसूर अली को मौत की सज़ा देने से नवाब साहब का क्या फ़ायदा हो जायगा। मंसूर-अली एक बहुत बड़ी साजि़श में शामिल था। वह सारा भेद तो उसी के साथ चला जायगा न ? हमारे हाथ क्या लगेगा ?'

रशीदा बोली—'मैं आपका मतलब समझ गई। आप चाहते हैं कि उसे जि़न्दा रख कर उससे फिरंगियों का भेद ले लेना चाहिये। मौत के

मुँह में पड़ा हुआ आदमी सब कुछ उगलने के लिये तैयार हो जायगा य ही न ?'

हँस कर आग़ामीर ने कहा—'तुम अब बहुत समझदार हो गई हो रशीदा ! तुमने ठीक सोचा है। मगर नवाब साहब से यह करवा लेना निहायत ही मुश्किल काम है।'

रशीदा बोली,—'इतने अहम मसले के लिये अगर आप एक मरतबा—'

दोनों कानों पर हाथ रखते हुये आग़ामीर ने कहा,—'न-न-न, मैं तो अब नवाब साहब के पास जाने की हिम्मत भी नहीं कर सकता। उस बात के लिये बादशाह बेगम ने मुझे ज़लील करने में कुछ उठा न रखा था। वह न जाने क्यों मेरी शक्ल से चिढ़ती हैं।'

रशीदा ज़रा गंभीर होकर बोली,—'मगर काम तो होना ही है। इससे हम सल्तनत अवध को बचा सकते हैं। मंसूर अली के सिवा फिरंगियों का भेद और कोई नहीं जानता।'

आग़ामीर चुप रह गए।

रशीदा आग़ामीर का हाथ पकड़ती हुई बोली,—'आप इस काम को ज़रूर अंजाम दें। आपके सिवा कौन यह काम कर सकता है ?'

आग़ामीर धीरे से बोले, 'मगर—'

स्फुठ-स्वर में रशीदा ने कहा,—'अब वक्त नहीं है। चार या पाँच घंटे में ही मंसूर अली को सजा दे दी जायगी। आप—'

आग़ामीर बोल उठे,—'अब कुछ नहीं हो सकता, रशीदा ! सारी रियासत मेरे और दर्शन सिंह के खिलाफ़ है। हम लोगों को क़दम फूँक-फूँक कर रखना पड़ता है। अगर हम सँभल कर, होशियारी से न चले तो एक दिन मंसूर अली की तरह ही हम लोगों को मरना पड़ेगा।'

रशीदा चुप रह गई। आगामीर बोले,—'अब मुझे छुट्टी दो रशीदा !

मुझे नवाब साहब का परवाना तामील करने मंसूर अली के पास जाना है।'

रशीदा ने पूछा, 'क्या नवाब साहब भी वहाँ—'

आग़ामीर बोल उठे,—'नहीं। वहाँ हमारे वज़ीरे-आजम रोशनुद्दौला साहब मौजूद रहेंगे। अब मैं चला।'

मुँह बनाकर रशीदा ने कहा—'आपको मेरे पास ज़ियादा बैठना न जाने क्यों अच्छा नहीं लगता।'

मुस्कराकर आग़ामीर ने कहा,—'मैं तो दिनदिन भर तुम्हारे ही पास लसे रहना चाहता हूँ, लेकिन अगर कहीं नवाब साहब भाँप गए कि उनकी चीज़ पर धीरे-धीरे मेरा कब्ज़ा होता जा रहा है, तो फिर, मुझे भी सज़ाये मौत से कम कुछ न मिलेगा।'

रशीदा लजा गई, बोली—'अच्छा अब मालूम हुआ कि यह सारी मोहब्बत दिखावटी ही है। सज़ाये मौत मिल जाय तो समझ लीजियेगा कि आप मेरे लिये क़ुरबान हो गए। क्या आप इस तरह की सज़ा से डरते हैं?'

आग़ामीर ने उसी तरह मुस्कराते हुए कहा—'ज़ुरूर डरता हूँ। मैं एक सियासी आदमी हूँ। दाँव-पेंच के ज़रिये से हर चीज़ पर कब्ज़ा कर लेना मेरा काम है। तब फिर क़ुरबान होने की ज़ुरूरत ही क्या है? अच्छा मैं चला, फिर कभी—'

आग़ामीर के जाने के बाद रशीदा बैठी कुछ देर तक सोचती रही। फिर कपड़े पहिन कर फ़ौरन घर से बाहर हो गई।

[१०]

गोमती के तट से थोड़ी दूर हट कर एक विस्तृत मैदान में आज सवेरे से ही जनता एकत्रित होने लगी है। आज यहाँ एक व्यक्ति को

मृत्यु-दंड दिया जायगा। डुग्गी पीट कर एलान किया गया की आज दोपहर को १२ बजे राज के प्रमुख कर्मचारी मंसूरअली को देश-द्रोह और राज-द्रोह के अपराध में ज़मीन में ज़िंदा आधा गाड़ दिया जायगा तथा उन पर भूखे जंगली कुत्तों को छोड़ दिया जायगा। मृत्यु-दंड की इस बर्बर प्रणाली को सुनकर यद्यपि रोमांच हो आता है, किंतु कैसे इस बर्बरता को कार्य रूप में परिणत किया जायगा इस उत्सुकता को जनता संवरण नहीं कर पाई। तभी तो ऐसे वीभत्स दृश्य को देखने के लिये हजारों की भीड़ उमड़ी पड़ती है।

ठीक ११॥ बजे हलचल मचने लगी। जहाँ पर मृत्यु-दंड दिया जाने वाला था वहाँ एक गढ़ा तैयार कर दिया गया था। गड्ढे के सामने एक बहुत बड़ा पिंजड़ा रक्खा हुआ था जिसमें पांच बड़े-बड़े शिकारी कुत्ते भूख से गुर्राते हुए बंद थे। इन भयानक जंतुओं को देखने से ही लोगों का हृदय दहलने लगता था। गढ़े के आस-पास काफ़ी जमीन छोड़ दी गई थी, तथा चारों ओर नंगी तलवारें लिये हुए पचास सैनिकों का पहरा लगा हुआ था। घेरे के निकट कई जड़ाऊ और बेशक़ीमती कुरसियां पड़ी हुई थीं। इन पर राज्य के प्रमुख कर्मचारी तथा मंत्री बैठे हुए थे। बीच में सबसे बड़ी कुरसी पर सलतनते अवध के वज़ीरे आज़म रोशनुद्दौला साहब विराज रहे थे।

आज का यह मृत्यु-दंड इन्हीं की अध्यक्षता में संपन्न होने वाला है।

ठीक समय पर सैनिकों से घिरे हुए मंसूर अली को वहाँ लाया गया। उसकी दशा विचित्र थी। सिर मुड़ा हुआ था और वस्त्र फटे हुए एवं अस्त-व्यस्त थे। चेहरा भय से पीला पड़ गया था। वध-स्थल पर गढ़े और भयानक कुत्तों को देख कर उसके मुँह से एक चीख निकल गई। कर्मचारियों और मंत्रियों के चेहरे पर भी उस चीख़ को सुन कर करुणा झलक आई।

मंसूर अली के हाथ-पैर बुरी तरह से बँधे हुए थे। सैनिक उसे ठेल

कर गढ़े के पास लाए। आँसुओं के अधिक्य ने उसके गालों को गीला और गंदा बना दिया था।

सहसा उसे वज़ीरे आज़म रोशनुद्दौला का स्वर सुनाई दिया, 'मंसूर अली!'

मंसूर ने सिर उठा कर उस ओर देखा।

रोशनुद्दौला ने कहा,—'मालिके अवध के हुक्म से तुमको सज़ाये मौत दी जा रही है। शायद तुम अपने खिलाफ़ लगाए जुर्म को जानते हो।'

मंसूर सिर झुकाये चुपचाप खड़ा रहा।

वज़ीरे आज़म ने फिर कहा,—'तुम पर सलतनते अवध व हुक्मराओं के खिलाफ़ गद्दारी करने का जुर्म साबित हो चुका है। अब मरने के लिये तैयार हो जाओ।'

आर्त स्वर से मंसूर बोला,—'मैं मालिके अवध के क़दमों पर सिर रख कर उनसे आख़िरी वक़्त मुआफ़ी माँगना चाहता हूँ। यही मेरी आखिरी ख़्वाहिश है।'

रोशनुद्दौला तथा अन्य मंत्रियों में कुछ परामर्श हुआ। इसके बाद रोशनुद्दौला ने कहा—'अफसोस है कि हम तुम्हारी इस दरख़्वास्त को मंज़ूर नहीं कर सकते। जहांपनाह का हुक्म पूरा होने में सिर्फ तीन मिनट बाक़ी रह गए हैं। अब ख़ुदा को याद करो।'

ख़ौफ़नाक मौत को सामने देखकर मंसूर बोला—'मैं बेगुनाह हूँ, हुज़ूर। मैं मालिके अवध के पास रहम की दरख़्वास्त करना चाहता हूं।'

रोशनुद्दौला ने कहा, 'अब वक़्त ख़त्म हो चुका है। अफ़सोस है कि हम तुम्हारे लिये अब कुछ नहीं कर सकते।'

पागलों की तरह चिल्लाते हुए मंसूर अली ने कहा—'ऐ लखनऊ के बाशिन्दों, देखो मुझ बेगुनाह पर कैसा ज़ुल्म ढाया जा रहा है। इस मुल्क का बादशाह बेवक़ूफ है। उसे लोगों ने गुमराह कर दिया है। इस मुल्क का, इस मुसलमानी सलतनत का सबसे बड़ा दुश्मन है हिंदू दर्शन सिंह।

उसी के इशारे पर सलतनत को नवाब साहब ने हिदुओं के हाथ बेच दिया है। मैं मर रहा हूँ, झूठ नहीं बोल सकता। इस सलतनत का का सबसे बड़ा गद्दार है हमारा नया वज़ीर आग़ामीर। उसने नवाब साहब को सबसे ज़्यादा गुमराह किया है। इस आग़ामीर को—इस रास्ते के फ़क़ीर को पत्थरों से मार दो। यह गद्दार टुकड़खोर आग़ामीर—'

'आग़ामीर, आग़ामीर, आग़ामीर' चारों तरफ से आवाजें उठने लगीं।

आग़ामीर आकर कुर्सी पर बैठ गए।

रोशनद्दौला ने आज्ञा दी,—'कैदो को गढ़े में डाल दो।'

सैनिकों ने मंसूर अली को गढ़े में उतार दिया। उसका धड़ सीने तक गढ़े के अंदर होगया। सैनिक गढ़े में मिट्टी भरने लगे।

मंसूर अली ने आँखें मूँद ली। उसे मृत्यु की विभीषिका सामने नज़र आई।

रोशनुद्दौला ने आज्ञा दी,—'कुत्तों को खोल दो।'

मंसूर अली फिर चिल्लाया,—'रहम करो, रहम करो, मुझे गोली मार दो—या अल्लाह रहम—'

जल्लाद ने पिंजड़े का द्वार खोल दिया। गुर्राता हुआ कुत्ता बाहर निकला। जल्लाद कस कर जंजीर पकड़े हुए था किंतु वह खौफ़नाक जानवर रस्सी तुड़ा कर अपने शिकार पर टूट पड़ने के लिये भयानक रूप से आतुर था।

'या अल्लाह' कह कर मंसूर अली ने अपनी आँखें बंद कर लीं।

रोशनुद्दौला ने ऐलान किया,—'अब समय हो गया है और मालिके अवध के हुक्म के पूरा होने का वक़्त आगया है। जल्लाद...'

एकाएक आग़ामीर ने उठ कर कहा,—'चंद अलफाज़ मैं वज़ीरे-आज़म की ख़िदमत में पेश करना चाहता हूँ—'

बीच ही में रोशनुद्दौला बोल उठे 'जल्द फरमाइये। मालिके अवध के हुक्म की तामीली में देर हो रही है।'

आग़ामीर ने जवाब दिया,—'इस तरह सज़ायें इनसानियत से गिरी हुई—'

रोशनुद्दौला ने स्फुट-स्वर में कहा,—'आप चुप रहिये आग़ामीर साहब ! इस तरह की बात करना मालिके अवध के दिये हुक्म की तौहीन है। आप बैठ जाइये। जल्लाद···'

आग़ामीर ने कहा—'मंसूर अली को यह सज़ा अब न दी जायगी। मैं मालिके अवध का हुक्मनामा लेकर आया हूँ।'

उन्होंने नवाब साहब का हुक्मनामा रोशनुद्दौला के सामने पेश कर दिया।

रोशनुद्दौला ने उसे पढ़ा और क्षण भर रुक कर आज्ञा दी, 'कुत्ते को पिंजड़े में बंद कर दो, जल्लाद ! मंसूर साहब को गढ़े से जल्द बाहर निकालो, सिपाहियो ?'

सारा वातावरण बदल गया। मंसूर साहब मृत्यु की प्रतीक्षा में अब तक आंखें बंद किये खड़े हुए थे। लोग समझ ही न पाए कि आग़ामीर ने आकर क्या जादू कर दिया।

आग़ामीर उठ कर मंसूर अली के पास आए और उसके कंधे पर हाथ रख कर बोले, —'घबराइये नहीं मंसूर साहब ! अल्लाह ने आपको इस ज़िल्लत की मौत से बचा लिया है।'

सिपाहियों ने उन्हें गढ़े से बाहर निकाला। मंसूर साहब होश में न थे। उन्हें आहिस्ता से खुले मैदान में लिटा दिया गया।

वज़ीर रोशनुद्दौला ने पूछा,—'लेकिन नवाब साहब ने अभी तक दूसरा फ़रमान तो ज़ारी नहीं किया ? तब तक हमको क्या करना होगा ?'

आग़ामीर ने कहा—'तब तक आप मंसूर अली को कैदखाने में रक्खें। मैं जल्द ही दूसरा फ़रमान लेकर हाज़िर होऊंगा।'

यह कह कर आग़ामीर चले गए रोशनुद्दौला ग़ौर से देखते रहे और बोले—'वाह' यह शख़्श भी ख़ूब है।'

मीर साहब ने कहा,—'नवाब साहब के मुँह जो लगा हुआ है।'

मिर्ज़ा साहब ने कहा—'लाहौल विलाक़ूबत। सारा मज़ा किरकिरा हो या।'

[११]

स्त्री में कोई सौंदर्य नहीं होता; जो कुछ सौंदर्य है वह पुरुष में है। पुरुष के लिये स्त्री एक खिलवाड़ है, तृप्ति का एक साधन मात्र है। स्त्री प्रत्येक पुरुष पर नहीं रीझती। प्रत्येक पुरुष प्रत्येक स्त्री पर आसक्त हो जाता है। तभी इन पंक्तियों के लेखक के मत से स्त्री में कोई सौंदर्य नहीं होता; जो कुछ सौंदर्य है वह पुरुष में है।

यह मनोविज्ञान ही कुछ ऐसा है। यह मनोवैज्ञानिक चेतना पुरुष की अपेक्षा स्त्री में अधिक होती हैं। स्त्री के इस मनोविज्ञान की कसौटी पर ठीक उतरने वाला पुरुष ही उसके स्नेह और प्यार का लक्ष्य होता है। पुरुष स्त्री में केवल वाह्य के दर्शन करता है, किंतु आंतरिक सौंदर्य पर ही रीझने के नाते स्त्री पुरुष की गहराई तक पहुँच कर ही उस पर मुग्ध होती है, और जब वह मुग्ध होती है तो फिर संसार की कोई भी शक्ति उसे विमुख नहीं कर पाती। पुरुष का वाह्य सौंदर्य स्त्री के लिये अधिक मूल्य नहीं रखता। स्त्री तो वास्तविकता पर रीझती है। पुरुष को सौंदर्य की परवा नहीं। इसी से हम कहते है कि स्त्री के कोई सौंदर्य नहीं होता। विचारणीय, मनन के योग्य और रीझने योग्य तो सौंदर्य होता है केवल पुरुष का।

स्त्री प्राय: पुरुष में सौंदर्य नहीं देखती, वह देखती है उसका शौर्य। वे प्राय: पुरुष की शिक्षा, गुण और ज्ञान पर मुग्ध होती है; पुरुष की प्रसिद्धि की ओर भी आकर्षित होती है। कहने का अभिप्राय यह है कि

स्त्री की पसंदगी का माप—दंड है उसका मनोविज्ञान उसकी इस मनोवैज्ञानिक चेतना का आधार उसकी शिक्षा नहीं, उसका स्वाभाविक ज्ञान है। शिक्षा, विद्वता, बुद्धिमत्ता, शौर्य तथा अन्य किसी विशिष्ट गुण के सकौशल अभिव्यक्ति कारण से प्रायः स्त्री को जीता जा सकता है।

रशीदा भी इसी प्रकार की स्त्री है। वह वाह्य सौंदर्य नहीं चाहती, वैभव नहीं चाहती और न चाहती है पद। वह तो गुण और नैतिकता पर मुग्ध होने वाली नारी है। तभी तो आग़ामीर की नैतिकला और सुलझे विचारों ने उसे मुग्ध किया है। किंतु आग़ामीर !

उसकी और रशीदा की मनोवैज्ञानिक मान्यतायें एक सी है। राजनीति और देश-भक्ति के लिये अपने को उत्सर्ग कर देने वाले आग़ामीर में तभी तो रशीदा के लिये अंदर ही अंदर एक प्यार सजग होने लगा है। रशीदा उसके आदर्शों, उसकी मान्यताओं को प्रगति प्रदान करती है। आग़ामीर विलासिता को अभिशाप समझाता है और रशीदा विलासिता को पतन का प्रतीक। किंतु दोनों ही में हीन-प्रवृत्ति काफ़ी मात्रा में है। रशीदा अपने को आग़ामीर के योग्य नहीं समझती और आग़ामीर रशीदा को ईद का चाँद समझता है।

आग़ामीर रशीदा के पास बैठा सलाह मशविरा कर रहा है। वह बोला,—'मंसूर अली के झगड़े में पड़ कर मैंने बादशाह बेगम को बहुत नाराज़ कर दिया है। वे दर्शनसिंह के पीछे तो पड़ी ही हुई थीं; अब हाथ धोकर मेरे पीछे भी पड़ गई हैं। दर्शन सिंह के खिलाफ़ एक नई साज़िश तैयार की जा रही है।'

कुछ आश्चर्य सा प्रकट करते हुए रशीदा ने कहा,—'दर्शन सिंह के खिलाफ़ नई साज़िश ? वह क्या ?

आग़ामीर क्षण भर चुप रह कर कहने लगे,—गोमती के किनारे एक मंदिर है। उस मंदिर के पास एक क़ब्रिस्तान है। बेग़म साहबा

और जनाब र शनुद्दौला के भड़काने से मुसलमानों ने उस मंदिर पर अपना दावा पेश कर दिया है। उनका कहना है कि मंदिर जिस चबूतरे पर बना हुआ है वह दर-अस्ल कब्रिस्तान ही है।'

रशीदा पूछ बैठीं, 'तब ?'

आग़ामीर ने जवाब दिया,—'दर्शन सिंह के पास वह मामला पेश है। इस मामले ने उन्हें परेशान कर रक्खा है।'

रशीदा ने कहा,—'मगर असलियत क्या है ?'

आग़ामीर ने कहा,—'असलियत जो हो, अगर वह हिंदुओं के हक में फैसला देते हैं तो बेग़म साहबा का वह अधिकार जम जाता है; साबित हो जाता है कि दर्शन सिंह हिंदू-परस्त हैं, और अगर वे हिंदुओं के खि़लाफ फैसला देता हैं तो वे हिन्दू भी उनके दुशमन हो जाते हैं। मुसलमान तो हैं ही।'

रशीदा बोली,—'वाक़ई बेगम साहबा की यह साजि़श तो हर पहलू से क़ामयाब नज़र आती है। मगर हम लोग दर्शन सिंह की मदद ही क्या कर सकते हैं ?'

आग़ामीर ने जवाब दिया,—'राजा दर्शन सिंह तो बुरी तरह से फंस गए हैं। सचमुच सलतनत का मुंतज़िम बन कर कोई भी शख्स ईमानदार नहीं रह सकता। राजा दर्शन सिंह-सा ईमानदार मुसिफ मिजाज़ अवध में एक भी शख्श नज़र नहीं आता।'

रशीदा ने कहा,—'यह भी सुना है कि फिरंगियों ने बेगम साहिबा पर यह भी दबाव डालना शुरू कर दिया है कि वह मलिके अवध से कह कर मंसूर अली क़ो रिहा करा दें।'

आश्चर्यान्वित होकर आग़ामीर ने पूछा, 'क्या सच है ?'

रशीदा कुछ मुसकरा बोली,—'मैं कोई भी ख़बर गलत नहीं लाती जनाब। आप जल्द ही इस ख़बर को सुन लेगें। फिर आप तो मंसूर अली की रिहाई.........'

बात काट क़र आग़ामीर ने कहा,—'तुम मुझे ग़लत समझ रही हो रशीदा। मैं मंसूर अली की कभी रिहाई नहीं चाहता था। मैं तो सिर्फ·········'

रशीदा बोल उठी,—'हो-हो, वह तो मैं सब समझती हूँ, लेकिन बेग़म साहबा को तो मौका मिल गया न ?'

दोनों चुप रहे। फिर रशीदा बोली,—'मगर फिर राजा दर्शन सिंह निराश से हो उठे।'··········'।

आग़ामीर निराशा से बोले, 'मैं उस मामले में राजा साहब की कुछ भी मदद नहीं कर सकता।'

° ° °

और—

रशीदा ने जो कुछ कहा था वह ठीक ही था। रेज़ीडेंट ने गुप्त रूप से बेगम साहबा से कहला भेजा कि मंसूर अली को मृत्य दंड दिया गया तो कंपनी की सरकार इस मामले को गवर्नर जेनरल तक ले जायगी।

बादशाह बेगम डरीं, मगर उनके सामने कोई उपाय न था। अंत में उनका सारा रोब फिर दर्शन सिंह पर केंद्रित हो उठा। इस मामले को तूल देने के लिये उन्होंने एक दिन रोशनुद्दौला को बुला भेजा। सब हाल सुन कर रोशनुद्दौला ने जड़ा, 'मलिके आलिया, दर्शन सिंह से ज़्यादा खतरनाक हैं हमारे नए वज़ीर—आग़ामीर। नवाब साहब ने उन्हें बहुत मुँह लगा रक्खा है। अगरचे उनकी कोशिश से ही उस वक्त मंसूर अली की जान बच गई, फिर भी इन सारी बातों में मुझे एक राज़ मालूम पड़ता है।'

बेगम चिंता में पड़ गई। रोशनुद्दौला कहते गए, 'मंसूर अली के मरते ही फिरंगी एक दम से तूफान वर्षा करेगें। मुझे तो अवध के बुरे दिन नज़र आ रहे हैं।'

वेगम घवड़ा गई। बोली,—'मेरा तो जी बैठा जा रहा है रोशनुद्दौला साहव !! समझ में नहीं आता कि आखिर क्या करूँ ? हज़रत को किस तरह बचाऊँ ?'

रोशनुद्दौला ने सुझाव दिया,—'फिरंगी को खश करने से ही सलतनत बच सकती है। दर्शन सिंह और आग़ामीर अवध को बरबाद करने पर तुले हैं।'

कुछ सोच कर वेगम बोली,—'तो फिर आप ही क्यों न एक दिन तखलिये में रेज़ीडेंट से जाकर मिलें। आप अवध के वज़ीर आज़म हैं; आपकी सलाह वजन रखती है। आप उनसे मिल कर समझा दें कि दर्शन सिंह और आग़ामीर को········ ।'

बात काट कर रोशनुद्दौला बोले,—'अगर कहीं नवाब साहव को पता चल गया तो गज़ब हो जायगा। रोशनुद्दौला का सिर भी······'

वेगम ने टोका,—'इसकी ज़िम्मेदारी मुझ पर हैं। आप रेज़ीडेंट से ज़रूर मिलें।'

रोशनुद्दौला ने कुछ सोच कर कहा—'इस मंदिर वाले झगड़े में ज़रा दर्शन सिंह को अच्छी तरह ज़लील हो जाने दीजिये। बाक़ी काम तो फिर बड़ी आसानी से हो जायगा।'

वेगम ने पूछा,—'मगर आग़ामीर—'

रोशनुद्दौला बोले,—'आगामीर को तो मैं भुनगे के बराबर भी नहीं समझता। उसे मैं चुटकियों में उड़ा दूँगा। इस दर्शन सिंह को पहिले ठिकाने लग जाने दीजिये। फिरंगियों को तो सिर्फ रुपया चाहिये। वह भर दिया जायगा। सलतनत बच जायेगी।'

वेगम ने कुछ अधिक उदास होकर कहा,—'आप जैसा ठीक समझें करें। सलतनत अवध को बचाना अपना काम है।'

रोशनुदौला बोल उठे, 'आप फ़िक्र न करें। धीरे-धीरे सब ठीक होजायगा।'

सारे शहर के मुल्ला और मोलवियियों को भड़का कर मैंने दर्शनसिंह के खिलाफ़ कर दिया है।'

[१२]

और—

सचमुच ही मंदिर वाले झगड़े को लेकर दर्शनसिंह बहुत बड़ी परेशानी में पड़ गए। मंदिर क़ब्रिस्तान से बिलकुल अलग था। इसमें झगड़े की कोई बात न थी। इसके अतिरिक्त मंदिर पचास साल पुराना था और आज तक किसी प्रकार का कोई झगड़ा न उठाया गया था। हिंदू लोग महावीर जी के दर्शन के लिये यदा-कदा पहुंच जाते थे और मंगलवार के दिन भीड़ बढ़ जाया करती थी। कभी किसी ने किसी प्रकार का एतराज़ उस पर नहीं किया। साथ ही इस कब्रिस्तान का भी कोई उपयोग न होता था। बरसों बीत गए, कभी मुसलमान का एक पुतला भी वहाँ नज़र न आया। दुर्भाग्यवश इधर हिंदुओं ने मंदिर का पुनरुद्धार प्रारंभ किया और उधर रोशनुद्दौला ने मुसलमानों को भड़का कर एक बड़ा भारी झगड़ा खड़ा कर दिया। मामला राजा दर्शनसिंह के विभाग से संबंधित था, अतएव गुत्थी उन्हीं को सुलझाना थी।

इधर अंग्रेज़ हिंदू-नेताओं को भडका रहे थे। नत्थामल जौहरी की अध्यक्षता में हिंदुओं का एक डेपूटेशन नवाब साहब से भी मिला और अंग्रेज़ रेज़िडेंट से भी। मामला तूल पकड़ता गया।

न्याय हिंदुओं के ही पक्ष में था। चारों ओर शत्रुओं से घिरे होने के कारण राजा दर्शनसिंह घबरा उठे। वह सदा से ही ईमानदार तथा न्यायशील रहे थे, किंतु यहाँ तो मामला ही दूसरा था।

नवाब साहब के भी कान भरे जा रहे थे। उन्हें समझा दिया गया था कि हिंदुओं की सरासर ज़्यादती है। मंदिर दूसरी जगह भी बनाया जा सकता है, लेकिन क़ब्रिस्तान वहाँ से नहीं हटाया जा सकता।

राजा दर्शनसिंह हिंदू-परस्त आदमी हैं। वह मुसलमानों के विरुद्ध ही फ़ैसला देंगे।'

नवाब साहब का मूड इस समय ठीक न था। झल्लाकर बोले, 'आप लोग जाइए। मैं दर्शनसिंह से बात कर लूंगा।'

दर्शनसिंह जीती मछली निगलने को तैयार न थे। उन्होंने हिंदुओं के ही पक्ष में फ़ैसला दिया।

बस, इस फ़ैसले को लेकर लखनऊ में एक हंगामा मच गया। मुसलमानों ने नगर भर में हड़ताल कर दी—महल के इर्द-गिर्द भीड़ें इकट्ठा होने लगीं। राजा दर्शनसिंह का तो घर से निकलना कठिन हो गया।

सारे शहर का वातावरण बिगड़ा देखकर नवाब साहब का पारा भी ऊंचा हो गया। उन्होंने दर्शनसिंह को बुला भेजा। डरते-डरते वह नवाब साहब के हुज़ूर में हाज़िर हो गए।

नवाब साहब की त्योरियां चढ़ी हुई थीं। वह बोले, 'यह क्या कर दिया आपने राजा साहब ?'

राजा साहब के मुंह से निकला 'मैंने इनसाफ़ ही किया है, जहांपनाह !'

नवाब साहब की आंखें क्रोध से लाल थीं। वह स्फुट स्वर में बोले, 'तू ग़द्दार है—तूने मुसलमानों के जज़बातों को पामाल किया है। मैं इस वक़्त कोई ज्यादा कड़ी सज़ा देना नहीं चाहता, सिर्फ़ नौकरी से बरतरफ़ करता हूं।'

राजा दर्शनसिंह पसीने-पसीने हो गए। उन्हें खड़े रहना मुश्किल हो गया। उनके मुंह से लड़खड़ाती भाषा में निकला 'जहांपनाह—'

चिल्लाकर नवाब साहब ने कहा, 'मेरी आंखों के सामने से तशरीफ़ ले जाइए, जाइए !'

राजा साहब चुपचाप बाहर हो गए। जिस अपमान की आशा न थी, वह होकर ही रहा। इतनी बेइज़्ज़ती! उन्होंने इस राज्य के लिये क्या नहीं किया? ईमानदारी, देशभक्ति और सेवा का कितना सुंदर पुरस्कार मिला है उन्हें? महल के बाहर अब भी भीड़ थी। राजा साहब जल्दी से बाहर आकर अपनी घोड़ागाड़ी पर बैठ गए। वह जल्दी ही भीड़ से बाहर हो जाना चाहते थे।

गाड़ी बढ़ी।

'ग़द्दार है'—भीड़ ने आवाज़ लगाई।

गाड़ी पर पत्थर बरसने लगे। राजा साहब ने चिल्लाकर कोचवान से कहा, 'जल्दी आगे बढ़ो।'

गाड़ी जल्दी-जल्दी आगे बढ़ने लगी। पीछे से दनादन पत्थर गाड़ी पर पड़ रहे थे। दर्शनसिंह का मृत्यु से सामना था, किंतु कोई उपाय न था। गाड़ी भागी चली जा रही थी। शोर कम होता गया और दर्शनसिंह अपनी कोठी पर पहुँच गए।

शीघ्र ही राजा दर्शनसिंह के निकाले जाने की ख़बर लखनऊ-भर में फैल गई। दुश्मनों के घरों में घी के चिराग़ जलाए गए। सबसे अधिक खुशी हुई बादशाह बेग़म को। उन्होंने समझ लिया कि अब अवध की सल्तनत बरबाद होने से बच गई। फिरंगी भी ख़ुश हुए। वे जानते थे कि अवध में सबसे समझदार व्यक्ति राजा दर्शनसिंह थे, उनके पतन से मार्ग साफ़ हो गया था।

आग़ामीर ने सुना, तो वह सोच में पड़ गए। उन्हें दर्शनसिंह के विरुद्ध होनेवाले षड्यंत्र का पता था, किंतु नवाब साहब की इस आज्ञा पर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ।

रशीदा से भेंट होने पर उन्होंने कहा, 'यह बहुत ही बुरी ख़बर है रशीदा। अल्लाह जाने क्या होने वाला है?'

रशीदा सारा समाचार सुन चुकी थी। बोली, 'नादान दोस्त से दाना दुश्मन ज़रूर अच्छा होता है। नवाब साहब को मैं नादान दोस्तों में समझती हूँ। मेरी तो कुछ समझ में नहीं आता। आप अगर मुनासिब समझें, तो नवाब साहब से बात कर सकते हैं।'

नकारात्मक ढंग से सिर हिलाते हुए आग़ामीर ने कहा, 'इस वक़्त नवाब साहब से मिलना अपने ऊपर क़हर को दावत देना है, रशीदा! तुम शायद अभी नवाब साहब को समझीं नहीं।'

रशीदा चुप रही। आग़ामीर कहने लगे, 'लखनऊ की तरक़्क़ी के लिये मैंने एक तहरीक़ तैयार की है। मगर अफ़सोस तो यह है कि उसे नवाब साहब के सामने पेश करने का मौक़ा ही नहीं आ पाता। मैं ख़ुद ही परेशान हूँ कि क्या करूँ, क्या न करूँ?'

रशीदा एक विश्वास लेकर चुप हो गई। आग़ामीर थोड़ी देर रुक कर बोले, 'शहर की सारी फ़िज़ाँ ख़राब हो गई है। दर्शनसिंह के साथ मेरा भी नाम लिया जा रहा है। कितने बुरे दिन आ गए हैं अवध के।'

दोनों थोड़ी देर तक चुप रहे। फिर रशीदा ने कहा, 'एक न एक दिन तो सभी कुछ खुलकर नवाब साहब से कहना ही पड़ेगा। आख़िर हम लोग पड़े-पड़े करेंगे ही क्या?'

मुस्कराकर आग़ामीर ने कहा, 'यह तो नवाबी है लखनऊ की। न जाने किस दिन क्या हो जाय? मैं तो ख़ुद अपनी ही सलामती मनाता रहता हूँ।'

रशीदा गंभीर वाणी में बोली, 'आप ठीक कह रहे हैं। मेरी हालत तो और नाज़ुक है। मैं तो किसी मसरफ़ की भी नहीं हूँ। मेरा कल्ला वो पहले ही कटेगा।'

आग़ामीर कुछ कहने ही जा रहे थे कि नौकर ने आकर अभिवादन किया।

आग़ामीर ने पूछा—'क्या है, बशीर ?'

बशीर ने बाअदब सिर झुकाकर कहा—'मलिके-अवध ने हुजूर को याद फ़रमाया है।'

आग़ामीर के पैरों की नीचे की धरती खिसक गई। उन्होंने कहा, 'अच्छी बात है। अभी आते हैं।'

नौकर चला गया। आग़ामीर ने कहा, 'अब खैरियत नहीं मालूम पड़ती। मगर चलो, इसी बहाने नवाब साहब से दो-दो बातें हो जायेंगी।'

रशीदा ने कहा, 'मैं तो समझती हूँ कि बात करने का यह अच्छा मौक़ा मिल गया है। इसमें डरना क्या ? अगर हमारा कोई इस्तेमाल सल्तनत के लिये नहीं है, तो हम लोगों को छुट्टी दी जाय।'

आग़ामीर ने जवाब दिया—'मैं अब जा रहा हूँ, रशीदा ! आज नवाब साहब से कुछ खुलकर बातें ज़रूर होंगी। या तो कुछ काम बना कर आऊँगा या फिर सल्तनते अवध से आग़ामीर का इस्तीफ़ा समझो।'

रशीदा ने पूछा—'तब फिर मेरा क्या होगा ?'

आग़ामीर ने उत्तर दिया—'आग़ामीर को भूलकर नवाब साहब की जी-जान से ख़िदमत करना।'

कुछ बिगड़कर रशीदा ने कहा—'जाइए, मैं आपसे नहीं बोलती, आप न-जाने क्या-क्या बातें करने लगते हैं।'

हँसकर आग़ामीर चले गए।

[१३]

नवाबी ज़माने के शासकों का क्रोध भी बड़ा भयानक होता था। क्रोध में अंधे होकर वे विवेक-हीन हो जाते थे। अपनी आकस्मिक, बिना विचारे, कृतियों पर उन्हें बाद में बुरी तरह से पछताना पड़ता था। राजा दर्शनसिंह को पद-च्युत करके भी नवाब साहब का ग़ुस्सा शांत नहीं हुआ। वह रह-रह कर नाराज़ हो उठते थे; बात-बात में क्रोध आता था। रेज़ीडेंट का ख़रीता उनके पास पहुँचा, उसे पढ़कर उनका क्रोध और भी भड़क उठा। रेज़ीडेंट ने लिखा था, 'इधर बहुत दिनों से लखनऊ के शासन की व्यवस्था गिरती जा रही है। आपकी तरफ़ से उसे सँभालने का उचित प्रबंध नहीं किया जा रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि आप और आपके कर्मचारियों में शासन को चलाने की योग्यता का अभाव होता जा रहा है। अभी हाल में किए गए फ़ैसले से जनता में आपके खिलाफ़ बग़ावत की भावनाओं ने और अधिक ज़ोर पकड़ा है। अगर यही हाल रहा, तो बहुत जल्द कंपनी सरकार को कोई दूसरा कदम उठाना पड़ेगा। इस पत्र द्वारा आपको चेतावनी दी जा रही है।'

इस पत्र के पाते ही नवाब साहब की दशा कुछ विचित्र हो गई। वह क्रोध, भय और चिंता से बौखला उठे। इस क्रोध की लहर में उन्होंने मंसूरअली फ़ौरन गोली मार देने की आज्ञा दी। पन्द्रह मिनट के अंदर कारागार के मैदान में लाकर मंसूरअली को गोली मार दी गई। मंसूरअली का अंत करके भी नवाब सासब का क्रोध शांत न हुआ। उन्होंने राजादर्शन सिंह को गिरफतार करने तथा उन्हें फौरन मृत्यु-दंड देने का परवाना तैयार कर दिया।

दर्शनसिंह के मृत्यु-दंड का परवाना हाथ में लिए हुए वह बेचैनी

के साथ कमरे में टहलने लगे। उनकी समझ में न आया कि वह अब करें क्या? कुछ सोचकर उन्होंने वह परवाना फाड़ डाला, और दर्शनसिंह की केवल गिरफ्तारी का दूसरा परवाना तैयार किया।

सेवक को बुलाकर उन्होंने कहा, 'इस परवाने को फ़ौरन वज़ीरे-आजम के पास पहुँचाओ।'

सेवक परवाना लेकर जा ने लगा। नवाब साहब ने उसे रोककर फिर कहा, 'परवाना पहुँचाकर फ़ौरन आग़ामीर को यहाँ हाजि़र होने का हुक्म सुनाओ।'

सेवक सिर झुकाकर चला गया। नवाब साहब को आग़ामीर की बुद्धि में आशा की झलक दिखाई दी। आग़ामीर क्या दर्शनसिंह से कुछ कम विद्वान हैं! उन्होंने विचारा। इन फिरंगियों को वह खूब समझता है। रेज़ीडेंट के पत्र का वही उत्तर भी दे सकेगा।

आग़ामीर ने पहुँचकर अभिवादन किया। कई दिन के बाद नवाब साहब के चेहरे पर मुस्किराहट दिखाई दी। स्नेह-पूर्वक उन्हें निकट बिठाते हुए नवाब साहब ने कहा, 'तुम तो इधर आना ही भूल गए आग़ामीर! इन दिनों मैं कितनी फि़क्रों में मुब्तिला हूं, अल्लाह ही जानता है—और हाँ......'

कहते-कहते नवाब साहब ने रेजीडेंट का वह खरीता मेज़ पर से उठाकर आग़ामीर के हाथों पर रख दिया। आग़ामीर खरीता पढ़ने लगे। उसे समाप्त करके उन्होंने एक लंबी साँस ली, और चुप हो गए।

नवाब साहब बोले, 'इस हरामज़ादे दर्शनसिंह की वजह से ही यह हंगामा मचा है, आग़ामीर! उसे सज़ाये मौत देना चाहता था, लेकिन फिलहाल उसे क़ैदखाने में जगह दे दी गई है। अब इस ख़रीते का क्या जवाब दिया जाय, इसी मसले को लेकर परेशान हूँ।'

आग़ामीर फिर भी चुप रहे। नवाब साहब फिर बोले, 'मैं समझता हूँ कि दर्शनसिंह को सज़ाये मौत देने के बाद ही इस ख़रीते का जवाब देना चाहिए। मैं तुम्हारी राय जानना चाहता हूँ।'

अब आग़ामीर ने मुँह खोला, 'जहाँपनाह ने जो कुछ भी किया, वह सोच-समझकर ठीक ही किया होगा, मगर..........'

वह फिर चुप हो गए। नवाब साहब उनके मुँह की ओर देख रहे थे। आग़ामीर ने कहा, 'मगर मैं नहीं समझ पाता कि आख़िर मालिके अवध को इस क़दर फिरंगियों से डरने की क्या ज़रूरत है। वे हमारा बिगाड़ ही क्या सकते हैं?'

नवाब साहब आश्चर्य से आग़ामीर की ओर देखने लगे। आग़ामीर कहते गए, 'हमारी अंदरूनी बातों से उनको क्या वास्ता? इस ख़रीते का जवाब देने के लिये हम मजबूर नहीं हैं। इस ख़रीते को भेजकर अंगरेज रेज़ीडेंट ने मालिके अवध के ख़िलाफ़ इतनी गुस्ताख़ी करने की जुरअत कैसे की!'

नवाब साहब आँखें फाड़कर आग़ामीर की ओर देख रहे थे।

आग़ामीर कहने लगे, 'इधर तीन-चार दिन के अंदर जो कुछ लखनऊ में हुआ है, उससे हमारी हुकूमत की कमजोरी ही जाहिर हुई है 'यह सारा हंगामा एक घंटे के अंदर ख़त्म किया जा सक्ता था। मैं जहाँपनाह से अर्ज़ करना चाहता हूँ कि क्या इस हंगामे के व़क्त जनाब रोशनुद्दौला साहब सो रहे थे? शाही फ़ैसले के ख़िलाफ़ सिर उठाने वालों का सिर क्यों नहीं कुचल दिया गया! क्या लखनऊ की नवाबी........'

सहसा आग़ामीर चुप हो गए। नवाब साहब ने फरमाया, 'मगर शाही फ़ैसले के ख़िलाफ़ किसने सिर उठाया, आग़ामीर? क्या दर्शनसिंह के फ़ैसले को ही तुम शाही फ़ैसला कह रहे हो?'

दृढ़ता के स्वर में आग़ामीर ने कहा, 'बेशक हम वज़ीर लोग जहाँ-

पनाह के नुमाइंदे हैं। हमारा फ़ैसला, हमारा हुक्म मालिके अवध का ही हुक्म समझा जायगा। हमारी हस्ती ही क्या है! फ़ैसला देने की ताक़त तो जहाँपनाह ने ही हमको अता की है। हमारे फ़ैसले पर मालिके अवध की ही तो मुहर लगती है।'

नवाब साहब बोल उठे, 'मगर अगर तुमने कहीं ग़लत फ़ैसला दे दिया, तो..........'

आग़ामीर कहने लगे, 'उस फ़ैसले को ग़लत या ठीक बतलाना जहाँपनाह का काम है। आप उस वज़ीर से कैफियत पूछ सकते हैं, पर फ़ैसले की मुखालिफत नहीं सह सकते हैं। किसी वज़ीर के फ़ैसले की मुखालिफ़त करना, आपके लिये खुद अपने ही फ़ैसले की मुखालिफ़त करना हुआ न?'

नवाब साहब निरुत्तर हो गए। रंग जमता देख आग़ामीर ने और जड़ा, 'गुस्ताख़ी मुआफ़ हो, इस हंगामे की कैफ़ियत वज़ीरे आज़म से तलब होना चाहिए। आख़िर रिआया को तीन दिन तक यह हंगामा क्यों करने दिया गया? क्या अवध की निज़ामत में ताक़त न थी कि वह इस झगड़े को दबा सकती। यह तो रोशनुद्दौला के लिये बड़े ही शर्म और......'

आग़ामीर चुप हो गए। नवाब साहब ने पूछा तथा कहा, 'अब क्या करना चाहिए, आग़ामीर? रिआया को दबा देना मामूली काम तो नहीं है।'

आग़ामीर आवेश में आ गए थे। वह कहने लगे, 'ग़लत काम करनेवालों के पैरों में ताक़त नहीं हुआ करती, जहाँपनाह! मैं भी लखनऊ में रहता हूँ। मेरी आँखें, मेरे कान और मेरी अ़क्ल अपना-अपना काम करते रहते हैं। इसी काम के लिये हुज़ूर से मुझे पैसे मिलते हैं। अपने काम को ठीक से अंजाम न देना मेरी सबसे बड़ी हरामख़ोरी होगी।'

क्षण-भर रुककर नवाब साहब ने कहा, 'लेकिन दर्शनसिंह ने इतना ग़लत फ़ैसला क्यों दिया, आग़ामीर ?'

गंभीर वाणी में आग़ामीर कहने लगे, 'गुस्ताख़ी मुआफ़ हो जहाँपनाह ! आप कैसे समझते हैं कि दर्शनसिंह ने फ़ैसला ग़लत दिया है ?'

नवाब साहब ने कहा, 'मुसलमानों के ख़िलाफ़ फ़ैसला देना ही ग़लत काम था।'

आग़ामीर बोले, 'तब फ़ैसला देने की ज़रूरत ही क्या थी ? हुज़ूर को हुक्म जारी कर देना था कि जो कुछ शहर के मुसलमान चाहते हैं, वही होगा ; चाहे ग़लत हो या सही। बेकार में दर्शनसिंह को बदनाम करने की क्या ज़रूरत थी ?'

नवाब साहब चुप थे। आग़ामीर आगे कुछ बोलना न चाहते थे। वह उठकर खड़े हो गए, और जाने की इजाज़त माँगी।

नवाब साहब आश्चर्य में भरकर बोले, 'चल क्यों दिए आग़ामीर, मुझे तुम से—'

आग़ामीर ने टोका 'मैं न जानता था कि सल्तनते अवध में हिंदू और मुसलमानों के लिये अलग-अलग कानून हैं। इस मुल्क में ये फिरंगी यही सब भेद-भाव कराने आए हैं। ख़ुदा उनका साथ दे रहा है।'

और आग़ामीर चलने को प्रस्तुत हुए। नवाब साहब बोले, 'ठहरो आग़ामीर ! तुम यह सब क्या कह रहे हो ?'

आग़ामीर बैठते हुए बोले, 'गुस्ताख़ी मुआफ़ हो जहाँपनाह! हिंदुओं को मुसलमानों के ख़िलाफ़ और मुसलमानों को हिंदुओं के ख़िलाफ़ उभाड़कर ही फिरंगी इस मुल्क में हुकूमत क़ायम कर सकेंगे। इस वक़्त हिंदोस्तान में मुसलमानों की हुकूमत लड़खड़ा रही है। हिंदुओं को उभाड़कर ही फिरंगी मुसलमानी सल्तनत की क़ब्र खोद रहे हैं। मुल्क

के तीन-चौथाई से ज़्यादा बाशिंदे हिंदू हैं। अगर मुसलमानों को इस नए हमले से अपने को महफ़ूज रखना है, तो उन्हें हिंदुओं से मिलकर चलने का सबक़ सीखना चाहिए।'

नवाब साहब हैरत में आ गए थे। बोले, 'तुम ठीक कह रहे हो आग़ामीर! मगर मुसलमानों को कैसे समझाया जाय।'

आग़ामीर बोल उठे, 'किसी भी मुल्क के हुक्मरां को इंसाफ़-पसंद होना चाहिये। वह न हिंदू है और न मुसलमान। हिंदू और मुसलमानों को एक नज़र से देखना ही सबसे बड़ी ताक़त है। आज मुसलमानों के ताअस्सुब की वजह से मुल्क के हिंदू दिन-पर दिन ताक़तवर होते जा रहे हैं। मरहठों की ताक़त का झंडा शुमाली हिंद तक फहरा उठा है। हमको अब अपनी ग़लती सुधारना है। रोशनुद्दौला जैसे ताअस्सुबी, खुदगरज और कमज़ोर आदमी अवध की हुकूमत नहीं चला सकते। हमको इस वक़्त एक मुल्कपरस्त, ईमानदार और ताक़तवर शख़्सियत चाहिये।'

नवाब साहब चुप थे। आग़ामीर ने कहा, 'लखनऊ में यह हिंदू-मुस्लिम निफ़ाक फैलाया हुआ है फिरंगियों का। उनके एजेंट हैं हमारे रोशनुद्दौला साहब। मैं इसका सुबूत दे सकता हूं।'

आग़ामीर की आंखें चमकने लगीं। वह बोले 'जहाँपनाह ने दर्शन-सिंह को सज़ा देकर अंगरेजों के हाथ ही मज़बूत किए हैं। मुझे अच्छी तरह से मालूम है कि इस अवध के अंदर, दर्शनसिंह से बड़ा हुज़ूर का कोई ख़ैर-ख़्वाह नहीं है।

नवाब साहब बोले,'मैं सियासी आदमी नहीं हूँ आग़ामीर! दर्शन-सिंह के छुटकारे का परवाना मैं तुम्हें अभी लिखकर देता हूँ। तुम उन्हें उनकी जगह पर बहाल भी करसकते हो। आगे की बात मैं तुम्हें सोच-कर बतलाऊँगा। मगर दर्शनसिंह को छोड़ देने से लखनऊ में फिर से कहीं गड़बड़ी उठ खड़ी हुई तो ?'

आग़ामीर ज़रा स्फुटस्वर में बोले, 'कैसी बातें कर रहे हैं जहां-पनाह ! मालिके अवध की ताक़त क्या लोग जानते नहीं । मैं एक घंटे के अंदर सारी गड़बड़ी ख़तम कर सकता हूं ।'

नवाब साहब आग़ामीर की ओर देखते रह गए । आग़ामीर ने कहा, 'अगर मेरा दम बरकरार है, तो मैं इन फ़िरंगियों को नाकों चने चबवा दूंगा । मगर पहले हम अपना घर तो सँभाल लें ।'

नवाब साहब के मुंह से निकला, 'बेशक, मैं बहुत जल्द इसका इंत-ज़ाम करूंगा । दर्शनसिंह की रिहाई और बहाली का परवाना लेते जाओ आग़ामीर । दर्शन सिंह का मंदिर के बारे में फ़ैसला भी मैं बहाल करता हूं ।'

परवाना लेकर आग़ामीर चले गए ।

× × ×

कड़ककर नवाब साहब ने कहा, 'अगर एक दिन के अंदर लखनऊ में अमनो-आमान क़ायम न हो गया, तो उसकी सारी ज़िम्मेदारी आप पर होगी रोशनुद्दौला साहब ! मंदिर किसी भी हालत में नहीं गिराया जा सकता । राजा दर्शनसिंह ने इंसाफ किया है ।'

रोशनुद्दौला ने धीरे से कहा, 'जहांपनाह जो कुछ फरमा रहे हैं वह ठीक ही है, मगर दर्शन-सिंह के फ़ैसले को शहर की मुस्लिम रियाया मानने को तैयार नहीं ।'

नवाब साहब क्रोध से आँखें लाल करके बोले, 'वह दर्शनसिंह का नहीं मेरा फ़ैसला है । उसे मुसलिम रियाया को मनवाना तुम्हारा काम है, तुम्हारी ज़िम्मेदारी है ।'

रोशनुद्दौला डरते-डरते बोले, 'मगर यह ज़रा मुश्किल काम है जहांपनाह ! मुस्लिम रियाया बुरी तरह बिगड़ी हुई है ।'

नवाब साहब इस समय किसी की न सुनने की मूड में थे । चिल्ला-कर बोले, 'मगर इस काम की ज़िम्मेदारी आप पर है ।'

रोशनुद्दौला बोले, 'मैं यह ज़िम्मेदारी नहीं ले सकता जहाँपनाह ! फिरंगी यह बात नापसंद करते हैं।'

नवाब बोले, 'मगर तुम मेरे ग़ुलाम हो—मेरे नौकर हो। फिरंगियों से तुमसे क्या वास्ता ?'

रोशनुद्दौला ने कहा, 'मगर मैं........'

बीच ही में नवाब साहब बोले, 'मैं तुम्हें वज़ारत से बरखास्त करता हूँ। तुम अभी यहाँ से निकल जाओ।'

रोशनुद्दौला सिर झुका चुपचाप चले गए।

उनके जाने के बाद नवाब साहब के मुंह से निकला, 'नमकहराम कहीं का। और ये फिरंगी—इन्हें भी एक दिन लखनऊ से निकाल बाहर करूंगा। अभी नवाबी मरनेवाली नहीं है—कम-से-कम गाज़ीउद्दीन हैदर को वे न हरा सकेंगे।'

[१४]

लखनऊ में इतनी जल्दी राजनैतिक उलट-फेर देखकर अँग्रेज़ भी घबरा गए। इतने शक्तिशाली व्यक्ति रोशनुद्दौला जब अपने पद से हटा दिये गए, तो सारे शहर को एकदम बड़ा आश्चर्य हुआ। सबसे अधिक आश्चर्य तो लोगों को नए प्रधान मंत्री का नाम सुनकर हुआ।

नवाब साहब ने रोशनुद्दौला की जगह मोतमुद्दौला आग़ामीर को अवध का प्रधान मंत्री या वज़ीरे आज़म घोषित कर दिया। रोशनुद्दौला ने अँग्रेज़ रेज़ीडेंट से जाकर फ़रियाद की, लेकिन वह कर ही क्या सकता था ? उसने अपनी विवशता प्रकट की। रोशनुद्दौला किधर के भी न रहे। और कोई उपाय न देखकर उन्होंने लखनऊ में सांप्रदायिकता का प्रचार शुरू किया। अब तक दर्शनसिंह के विरुद्ध लोगों को भड़काते थे, अब उन्होंने नवाब साहब और आग़ामीर के विरुद्ध विष उगलना शुरू किया।

आग़ामीर पर बड़ा भारी उत्तरदायित्व आ गया था, किंतु वह विचलित न हुए। इधर लखनऊ में उपद्रव बढ़ा और उधर आग़ामीर ने शक्ति से काम लिया। नागरिकों के ऊपर आग़ामीर का कुछ ऐसा रोब ग़ालिब हुआ कि वे लोग शांत हो गए। आग़ामीर किसी से डरनेवाले न थे। उन्होंने स्पष्ट रूप से घोषित कर दिया कि जो कुछ फ़ैसला मंदिर के विषय में दर्शनसिंह ने दिया वह बिल्कुल न्याय-युक्त है। यह भी ऐलान कर दिया कि आज से हिंदू-मुस्लिम रिआया में किसी तरह का भेद-भाव न समझा जायगा। इस प्रकार के भेद-भाव का प्रचार करनेवाले को मृत्यु-दंड दिया जायगा। कई व्यक्तियों को मृत्यु-दंड दिया भी गया। सर्वत्र शांति स्थापित हो गई। थोड़े ही दिनों में फिरंगी भी दब गए। आग़ामीर के सामने उनकी एक न चली।

सबसे पहला कार्य प्रधान मंत्री होकर आग़ामीर ने यह किया कि शासन का ख़र्च घटाकर आधा कर दिया। मुफ़्त का लंबा वेतन लेकर जो राज कर्मचारी मौज काट रहे थे उनका वेतन उन्होंने आधा कर दिया। नवाब साहब की दिखावटी शानोशौकत में भी कमी कर दी। व्यक्तिगत ख़र्च में उन्होंने ऐसी कमी कर दी कि नवाब साहब को कोई असुविधा भी नहीं हुई और व्यय भी बहुत कम हो गया। रिश्वतख़ोर और बेईमान हाकिमों को निकाल बाहर कर दिया गया।

राज्य की आर्थिक व्यवस्था बहुत कुछ सुधर गई। व्यय कम हो जाने से आग़ामीर ने जनता पर लगनेवाले कर को भी घटा दिया। जनता प्रसन्न होकर आग़ामीर पर आशीर्वादों की वर्षा करने लगी। यही नहीं, उन्होंने जनता की सुविधा के लिये शहर में बहुत से बाग़-बग़ीचे और पार्क बनवा दिए। कई चिकित्सालय खोल दिये गए। बच्चों को पढ़ाने के लिये राज्य की ओर से बहुत से मदरसे और पाठशालाएँ खुलीं।

इस उन्नति और सुधारों से नवाब साहब बहुत प्रसन्न थे। उन्हें स्थायी रूप से शांति मिल गई। वे प्रायः अपना समय आग़ामीर के साथ ही व्यतीत करने लगे। रोज़ सुधार की नई-नई योजनाएँ बनतीं और नवाब साहब से स्वीकृति लेने के बाद आग़ामीर उसको कार्यान्वित करने में जुट जाते।

वज़ीरे आज़म होने के बाद ही आग़ामीर कारागार में दर्शनसिंह से जाकर मिले। दीन-हीन और मलिन दशा में राजा साहब अँधेरी कोठरी में धरती पर लेटे हुए थे।

आग़ामीर की आँखों में आँसू आ गए। भरे कंठ से आग़ामीर ने कहा, 'उठिए राजा साहब, यह जगह आपके लायक़ नहीं है।'

दर्शनसिंह का भी गला अवरुद्ध था। वह आग़ामीर के साथ ही कारागार से बाहर निकले।

किंतु आग़ामीर के लाख चेष्टा करने पर भी दर्शनसिंह ने फिर अपने पद पर आना स्वीकार न किया। आग़ामीर ने राज्य की ओर से उन्हें एक अच्छी-ख़ासी पेन्शन आजीवन गुज़ारे के लिये निश्चित करा दी। राजा दर्शनसिंह ने फिर कभी राज्य की राजनीति में भाग नहीं लिया।

आग़ामीर अवध के लिये कोई बड़ी भारी योजना तैयार करने में संलग्न थे। वह अवध को हिंदोस्तान का स्वर्ग बना देना चाहते थे। जनता पर उनका इतना प्रभाव था कि जिस योजना को बनाकर जनता के सामने रखते थे वह स्वीकृत कर ली जाती थी। योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिये उन्हें धन भी जनता से बहुत मिल जाता था।

आग़ामीर स्वयं बहुत सादे लिवास में रहते थे। राजमहल में उनकी, वज़ारत का दफ़्तर अवश्य था, किंतु स्वयं एक साधारण-से घर में

रहते थे। जनता का कोई भी व्यक्ति उनसे किसी समय भी मिल सकता था। ग़रीबों को कम तथा अमीरों को अधिक कर देना पड़ता था।

× × ×

इस झंझट में पड़कर हम कदाचित् रशीदा बानू को भूलने-से लगे हैं' किंतु यह बात नहीं है। आग़ामीर की प्रत्येक योजना में रशीदा का कुछ-न-कुछ योगदान रहता था।

ग्रीष्म काल के दिन थे। गोमती तट पर एक साधारण-सी झोपड़ी में आग़ामीर और रशीदा बानू बातें कर रहे हैं। रशीदा ने भवों पर बल डालते हुये कहा, 'आप तो दरिया के किनारे झोपड़ी बना कर रहने लगे। उधर महलों में आना ही छोड़ दिया।'

आग़ामीर मुस्किरा कर बोले, 'मैं तो फ़क़ीर हो गया हूं बानो! गोमती के किनारे का बाशिंदा मेरा राजमहलों से क्या वास्ता?'

रशीदा बोली, 'वाह रे आपकी गोमती। गर्मी के दिनों में तो यह नाले से भी बदतर हो जाती है! लोग जी भर कर पानी भी तो नहीं पी पाते। आप अवध के वज़ीरे आज़म हैं। दुनिया भर में तरक़्क़ी की बातें करते हैं, इस गोमती की तरक़्क़ी क्यों नहीं कर डालते।'

कह कर रशीदा ज़ोर से हँसने लगी। आग़ामीर गंभीर होकर बोले, 'यह मेरे हाथ की बात नहीं है, रशीदा—'

बात काटकर रशीदा बोली, 'आपके हाथ की बात क्यों नहीं है। कहीं से पानी मंगवाकर गोमती में भरवा दीजिये। बस सारा लखनऊ चमन-ही-चमन हो जायगा।'

बात साधारण-सी थी और हंसी में कही गई थी, लेकिन आग़ामीर का उर्वर मस्तिष्क ज्ञान की दुनियां में चक्कर काटने लगा था। क्या सचमुच कहीं से पानी गोमती में लाया जा सकता है? अगर ऐसा

हो जाय, तो फिर अवध का क्या कहना ? सारा लखनऊ चमन हो जाय।

उन्हें अत्यंत गंभीर देखकर रशीदा ने कहा, 'आखिर किस अंधेरी दुनियां में जा पहुंचे वज़ीरे आज़म साहब ? क्या गोमती से गंगा तक पहुंच गए।'

'गंगा ! तब गंगा का पानी क्या गोमती में नहीं लाया जा सकता?' 'आग़ामीर के मुंह से निकला।

रशीदा 'ही-ही-ही' करके हँस पड़ी। बोली, 'आप भी खूब हैं आगामीर साहब। गंगा के पानी को गोमती में लाने की बात सोचने लगे। बहुत सोचिएगा, तो दिमाग़ खराब हो जायगा।'

लेकिन बात आग़ामीर के दिमाग़ में घर कर गई। 'गंगा का पानी गोमती में क्यों नहीं लाया जा सकता ? ओह, कितना हरा-भरा चमन हो जायगा लखनऊ।'

रशीदा भी अब गंभीर हो गई थी।' बोली, 'गंगा लखनऊ से क़रीब पचास मील दूर होगी। गोमती में उसका पानी लाया जा सके, यह नामुमकिन है।'

कुछ सोचकर आग़ामीर बोले, 'दुनिया में कोई बात मुश्किल नहीं है। पचास मील का नाला खोद कर गंगा के पानी को लखनऊ में लाया जा सकता है। तुम्हें नहीं मालूम रशीदा कि ऐसा हो जाने से लखनऊ दुनिया का बेहतरीन शहर हो जायगा। सदियों तक लोग आग़ामीर को याद करेंगे।'

रशीदा समझ गई कि आगामीर इस प्रश्न को लेकर बड़े गंभीर हो गए हैं। वह पछता कर बोली। 'तब मैंने यहाँ आकर....'

हँस कर आग़ामीर बोले 'तुम फिक्र मत करो, रशीदा ! आग़ामीर जो कुछ सोचते हैं, वह होकर ही रहता है। आज खुदा के फज़ल से एक

ऐसी बात दिमाग़ में आ गई है, जिसे सुनकर लोग फड़क उठेंगे। अब तो गंगा के पानी को गोमती में लाना ही पड़ेगा।'

रशीदा बोली, 'नवाब साहब इतना रुपया सर्फ़ करने को तैयार हो जायेंगे ?'

आग़ामीर ने कहा, 'तुम अभी नवाब साहब को समझ नहीं पाई हो रशीदा ! नवाब साहब बहुत सीधी तबियत के एक भोले-भाले आदमी हैं। हर एक अच्छी बात को पसंद कर लेते हैं। वे विलासी और क्रोधी ज़रूर हैं, मगर यह उनका कुसूर नहीं है। ये बातें हरएक बड़े आदमी में होती हैं, फिर नवाब साहब तो मालिके, अवध ठहरे। उनकी अच्छा-इयों से फ़ायदा उठाना चाहिए। उनकी बुराइयों से हमारा क्या वास्ता।'

रशीदा बोली, 'इसमें तो बड़ा रुपया सर्फ़ होगा।'

हँसकर आग़ामीर ने कहा, 'मालिके अवध के पास रुपयों की कमी नहीं है। फिर रियाया भी तो हमारा साथ देगी। हम तो रियाया की ही भलाई की बात करने जा रहे हैं।'

आग़ामीर उठ खड़े हुए और बोले, 'मैं नवाब साहब के पास जा रहा हूँ। हालाँकि यह वक़्त उनकी रंगीनियों का है, फिर भी मैं रुक नहीं सकता। नवाब साहब को यह खुशखबरी अभी जाकर सुनाता हूँ।'

रशीदा बोली, 'मगर यह न भूल जाइएगा कि इस ओर मैंने ही 'पहिले-पहल इशारा किया है।' 'आग़ामीर हँसने लगे।

[१५]

नवाब साहब का प्रमोद भवन।

नर्तकियों का नृत्य चल रहा है। खूबसूरत सोने की सुराहियों में सुगंधित मदिरा वातावरण को नशीला बना रही है। कई सुंदरियाँ नवाब साहब के इर्द-गिर्द बैठी मदिरा ढाल रही हैं। नवाब साहब के ख़ास सभासद मीर साहब और मिर्ज़ा साहब पास ही बैठे हुए चुस्त शेरों से नवाब साहब का मनोरंजन कर रहे हैं।

गान और नृत्य समाप्त हुआ। एक सुंदरी ने रत्न-जटित स्वर्ण चषक में सुरा ढालकर नवाब साहब को अपने हाथ से पिला दी।

नशे में उन्मत्त नवाब साहब ने कहा, 'अम्यां मीर साहब! ये शराब, ये नाज़नीन, ये मस्ती की बहारें, यह लखनऊ!'

मीर साहब झूमकर बोले, 'जहाँपनाह, क्या कहना है लखनऊ का। अगर दुनिया में कहीं जन्नत है, तो लखनऊ में। शेर अर्ज़ है—

लखनऊ हम पर फ़िदा है, हम फ़िदाए लखनऊ;
आसमां की क्या हक़ीक़त, जो छुड़ाए लखनऊ।'

मिर्ज़ा साहब मुँह बनाकर बोले। 'ग़लत, बिल्कुल ग़लत। सरासर ग़लत। अम्याँ मीर साहब, जब भी कोई शेर पढ़ा, ग़लत ही पढ़ा। यह शेर यूँ नहीं यूँ है—

लखनऊ सब पर फ़िदा है, सब फ़िदाए लखनऊ;
तुफ़ है उसकी ज़ात पर, हम से छुड़ाए लखनऊ।'

'वाह-वाह', 'ख़ूब-ख़ूब', 'क्या कहने हैं।' मिर्ज़ा साहब की आवाज़ चारों ओर मस्ती के साथ उठने लगीं। मिर्ज़ा फिर चहके, 'या यों के कहिए—

'लखनऊ हम पर फ़िदा, और हम फ़िदाए लखनऊ;
ता अबद क़ायम रहे, फरमा रवाए लखनऊ।'

'मुक़र्रर इर्शाद, 'क्या बात है' के नारे लग गए। मिर्ज़ा ने मानो क़लम तोड़ दी।

मीर साहब का चेहरा झेंप और अपमान से लाल हो उठा। वह ताव खाकर बोले, 'जहाँपनाह, दूसरा शेर अर्ज़ है:—

अरमाँ कुछ भी न निकले, आशिके दिलगीर के;
इसलिये तख़्ते लगाए क़ब्र में शहतीर के।'

मिर्ज़ा साहब ने मुँह बनाकर नकारात्मक ढंग से सिर हिलाया और बोले, 'शेर में कुछ जान नहीं मालूम पड़ती। सुनिये शेर अर्ज़ है—

गिड़गिड़ा कर क़ैस ने, लैला के भाई से कहा,
हम भी हो सकते हैं शौहर, आपकी हमशीर के।'

'वाह-वाह' 'मुक़र्रर इर्शाद' 'वाह मिर्ज़ा साहब' 'कमाल करते हैं आप' की आवाज़ों से मिर्ज़ा साहब की इज़्ज़त अफ़ज़ाई होने लगी।

मीर साहब ग़ुस्से में भरकर 'बोले, आप शायर नहीं भाँड़ हैं, मिर्ज़ा साहब ! यह भी कोई शेर है।'

मिर्ज़ा साहब बिगड़कर कुछ कहने ही जा रहे थे कि नवाब साहब हँसते हुए बोले 'मीर साहब और मिर्ज़ा साहब दोनो ही की शायरी का रंग अलग-अलग है। मुझे दोनो पर नाज़ है।'

तभी सेवक ने आकर अभिवादन किया, 'आग़ामीर दरवाज़े पर हाज़िर हैं। हुज़ूर का नियाज़ हासिल करने के ख़्वाहिशमंद हैं।'

नवाब साहब सँभलकर बैठ गए। वह न जाने क्यों आग़ामीर से डरने लगे थे। हुक्म हुआ कि उनको अंदर आने की इज़ाज़त दी।

सेवक चला गया। नवाब साहब ने कहा, 'यह महफ़िल बरख़्वास्त करो। आग़ामीर ज़रूर किसी काम से आए होंगे।'

महफ़िल समाप्त हो गई। सिर्फ़ मीर साहब और मिर्ज़ा साहब रह गए।

आग़ामीर ने आकर अभिवादन किया और बोले, 'मैं निहायत शर्मिंदा हूँ कि मैंने बेवक्त आकर जहाँपनाह को परेशान किया।'

हँसते हुए नवाब साहब ने कहा, 'शाने-अवध आग़ामीर! तुम्हारे आने से मुझे कोई परेशानी नहीं हुई। तुम ज़रूर कोई अच्छी खबर लाए होगे।'

नवाब साहब की आज्ञा से आग़ामीर उनके पास ही मसनद पर बैठ गए।

आग़ामीर ने कहा, 'हम लखनऊ की तरक़्क़ी के लिये एक ऐसा काम करना चाहते हैं कि जिसमें लखनऊ की रौनक़ दोबाला हो जाय। लखनऊ की शानो शौकत........'

बीच ही में मीर साहब बोल उठे, 'ठीक है, बजा है, दुरुस्त है। लखनऊ का क्या कहना है। शेर अर्ज़ है—'

आँखें लरेर कर आग़ामीर ने कहा, 'मीर साहब, आप बहुत ही नेक इंसान हैं। मगर शेर और शायरी का वक़्त हुआ करता है। हम इस वक़्त सियासी बातें करना चाहते हैं। अच्छा हो, आप अगर इस वक़्त तशरीफ़ ले जायँ।'

नवाब साहब बोल पड़े, 'आप लोग इस वक़्त तशरीफ़ ले जा सकते हैं।'

रास्ते में मीर ने मिर्ज़ा से कहा, 'यह निहायत ही बदतमीज़ आदमी है, आग़ामीर।'

मिर्ज़ा ने कहा, 'सलीक़ा तो छू नहीं गया है।'

प्रेम से आग़ामीर के कंधे पर हाथ रखते हुए नवाब साहब ने कहा, 'मगर यह सब हो कैसे सकेगा मेरे दोस्त?'

आग़ामीर ने निर्भीक वाणी में कहा, 'यह सब खुदा के फज़ल और आपकी मेहरबानी से होगा जहाँपनाह! मालिके अवध क्या नहीं कर सकते।'

सिर हिलाते हुए नवाब साहब ने कहा, 'मगर गंगा का पानी यहाँ से करीब पचास मील.......।'

बात काटकर आग़ामीर ने कहा, 'हिंदुओं की मज़हबी किताबों से पता चलता है कि गंगा को सरग से ज़मीन पर लाने की कामयाब कोशिश की गई थी। हम तो सिर्फ़ गंगा को लखनऊ में लाने की बात सोच रहे हैं?'

प्रसन्न होकर नवाब साहब बोले, 'शाबाश आग़ामीर! तुम्हारी हिम्मत को आफ़रीं हैं। मुझे यक़ीन हो गया कि तुम ज़रूर इस काम में कामयाब होगे।'

आग़ामीर चुप रहे। नवाब साहब मस्ती में झूमकर बोले,

'वाह ! क्या कहना है। जिस वक़्त उमड़-घुमड़कर गंगा का पानी लखनऊ की सर ज़मीन पर बहने लगेगा, उस वक़्त अवध का यह चमन किसी क़दर जन्नत से कम न रह जायगा। वाह आग़ामीर, ख़ुदा की कसम, तुम्हारी जितनी भी तारीफ़ की जाय थोड़ी है। इस काम में जितना भी रुपया सर्फ़ हो थोड़ा है।'

आग़ामीर ने कहा, 'रुपए से ज्यादा इसमें खर्च होगा वक़्त और दिमाग़ हुज़ूर। यह कोई मामूली काम नहीं है।'

कुछ आवेश में आकर नवाब साहब बोले, 'जितना भी रुपया खर्च हो, किया जाय। अब तो गंगा के पानी को लखनऊ में आना ही पड़ेगा।'

नवाब चुप रहे। आग़ामीर ने कहा, 'आज ही मेरे दिमाग़ में यह बात आई है। मैं फ़ौरन् बेवक़्त हुज़ूर के पास दौड़ा आया।'

नवाब साहब कहने लगे, 'यह काम फौरन् शुरू कर देना होगा। तुम रुपए की फ़िक्र मत करना, आग़ामीर ! इस काम में अगर अवध का सारा ख़ज़ाना भी खाली हो जाय, तो परवाह नहीं।'

कुछ सोचकर आग़ामीर बोले, 'इस काम से लखनऊ की रैयत भी मालामाल हो जायगी। हज़ारों बेकार बाशिंदों को काम भी मिल जायगा।'

नवाब साहब बोले, 'बेशक। तुम फौरन् तखमीना तैयार करो। मज़दूरों की भरती भी वक़्त से शुरू कर दी जाय। अगले माह से नहर की खुदाई का काम भी शुरू हो जाना चाहिए।'

आग़ामीर बहुत प्रसन्न थे। बोले, 'मालिके-अवध की मेहरबानी से यह काम जल्द ही शुरू होगा और जल्द ही खत्म हो जायगा। देर किस बात की है।'

कुछ सोचकर नवाब साहब बोले, 'तुम्हें मेरा एक हुक्म और मानना पड़ेगा, तुम बहुत ही मामूली मकान में रहते हो, आग़ामीर। वज़ीरे

आज़म को यह ज़ेबा नहीं देता। इससे सल्तनते अवध की तौहीन होती है।'

आग़ामीर बोले, 'हम रियाया के नौकर हैं। अपनी रहाइश में रियाया का पैसा सर्फ़ नहीं कर सकते। हमारी शान और हमारा फ़र्ज कहता है कि हम बहुत ही मामूली तौर पर रहें। जब तक नहर बन कर तैयार न हो जायगी, मैं ख़ज़ाने से आधी तनख़्वाह ही लिया करूँगा, जहाँपनाह !'

नवाब साहब आग़ामीर के मुँह की ओर देखने लगे। आग़ामीर कहते गए, 'रियाया को भी हमारा हाथ बँटाना पड़ेगा। जब लोग हमारे काम को अहमियत को समझ जायँगे तो फिर ख़ुशी से पैसा देंगे। अल्लाह भी हमारी मदद करेगा।'

क्षण-भर चुप रहकर नवाब साहब बोले, 'मैं कल ही नहर बनाने का हुक्म जारी कर दूँगा। मुझे कुछ दिनों के लिये फ़ैज़ाबाद जाना है। मेरी अदम मौजूदगी में भी यह काम होता रहेगा। इस काम के सारे भार तुम पर ही रहेंगे। आग़ामीर !'

[१६]

बादशाह बेगम का षड्यंत्र जारी था। चोट खाए हुए रोशनुद्दौला ने गुप्त रूप से बेगम साहबा के महल के चक्कर लगाने शुरू कर दिए थे। अँग्ररेज रेज़ीडेंट से भी परामर्श जारी था।

रेज़ीडेंट ने आज ख़ास तौर पर रोशनुद्दौला को कोठी पर बुला भेजा था।

बातचीत के सिलसिले में रोशनुद्दौला ने कहा, 'यह आग़ामीर निहायत ही होशियार और चलता-पुर्जा शख्स है। नवाब साहब को गुमराह करने में इसने पूरी कामयाबी हासिल कर ली है।'

रेज़ीडेंट ने कहा, 'मगर इसको रास्ते से हटाना ही पड़ेगा। कंपनी

बहादुर नवाव साहब को जल्द ही गद्दी से उतारनवाली है। गवर्नर जनरल साहब भी नवाब साहव से बहुत नाराज़ हैं।'

रोशनुद्दौला बोले, 'आप ठीक ही फरमा रहे हैं, हुज़ूर। वेग़म साहबा बहुत परेशान हैं। तभी तो आपकी तरफ़ मदद का हाथ बढ़ाया है। अब हुज़ूर जैसा भी ठीक समझें, करें।'

रेज़ीडेंट साहब बोले, 'हम वेग़म साहवा से मिलना चाहता है। इस आग़ामीर को हर हालत में ख़त्म करना पड़ेगा। इसका तरकीब निकालना होगा।'

रोशनुद्दौला ने कहा, 'यह शख्स एक मामूली आदमी है। नवाव साहब ने हम सब के सिर पर लाकर बिठा दिया है। हम लोग यह बात बरदाश्त नहीं कर सकते।'

रेज़ीडेंट ने कहा, 'इसमें वेग़म साहबा की भी मदद चाहिए। विना उनकी मदद के हम कुछ नहीं कर सकता। सबसे पहिले हमको बैठकर सलाह-मशविरा करना चाहिए।'

रोशनुद्दौला बोले, 'मैं जल्द ही इसका इंतज़ाम करूँगा। नवाव साहब कुछ दिनों के लिये फ़ैज़ाबाद जानेवाले हैं। वह मौक़ा बहुत बढ़िया रहेगा।'

× × ×

रशीदा ने आग़ामीर के कमरे में पहुँच कर उन्हें जगाया।

आधी रात का वक्त। आग़ामीर भड़भड़ाकर उठ बैठे। आँखें मलते हुए आश्चर्य के साथ बोले, 'कौन रशीदा? इस वक़्त आधी रात में..............'

रशीदा उजलत में थी, बोली, 'वक्त बरबाद करने का मौक़ा नहीं है। अभी-अभी बादशाह वेग़म के महल में अँगरेज़ रेज़ीडेंट और रोशनुद्दौला को छिपकर जाते देखा है। न जाने क्या आफ़त आनेवाली है। जो ठीक समझिए कीजिये।'

कुछ मुस्किरा कर आग़ामीर ने कहा, 'इतनी रात में तुमने उन्हें कैसे देख लिया रशीदा ? क्या तुम जाग रही थीं ?'

रशीदा बोली, 'मैं रात में कई बार बादशाह बेग़म के महल का चक्कर काटती रहती हूँ। लेकिन आप जल्दी कीजिए, नहीं तो—'

फिर मुस्किराकर आग़ामीर ने कहा, 'तुम फ़िक्र न करो, रशीदा !' अब वे दोनों महल से निकलकर बाहर न जा सकेंगे। मेरे भी आदमी मुझे ख़बर देने आते ही होंगे।'

तभी किसी ने आकर दरवाज़ा खटखटाया। आग़ामीर ने धीरे से कहा, 'आ, जाओ शेर ख़ाँ !'

एक लंबा-चौड़ा व्यक्ति सिर से पैर तक अपने को काले लबादे में छिपाए भीतर आ गया।

आग़ामीर ने पूछा, 'क्या ख़बर है, शेरख़ाँ ?'

शेरख़ाँ ने कहा, 'रोशनुद्दौला साहब फिरंगी को लेकर बेग़म आलिया के महलों की तरफ़ गए हैं।'

आग़ामीर ने कहा, 'अच्छी बात हैं। 'दफेदार नासिर अली को चुपके से खबर कर देना कि कड़ा पहरा रहे। ये लोग बाहर जाने के पेश्तर ही गिरफ्तार कर लिए जायँ।'

'जो हुक्म,' कह कर शेरख़ाँ चला गया।

मुस्किराकर आग़ामीर ने कहा, 'अब तुम आराम करो जाकर रशीदा बानू ! मैं न जानता था कि तुम इतनी बड़ी जासूस हो। नवाब साहब के आने पर तुम्हें अच्छा-ख़ासा इनाम दिला दूँगा।'

मुँह बनाकर रशीदा ने कहा, 'मुझे इनाम की ख्वाहिश नहीं है। मुझे तो नवाब साहब ने जो इनाम अता किया है, वही मेरे लिये बहुत है। आपको तो बात करने की फ़ुरसत ही नहीं,' कहकर रशीदा मुस्किराई।

आग़ामीर ने कहा, 'अब मैं भी गश्त के लिये जा रहा हूँ। तुम जाकर आराम करो।'

रशीदा का मन जाने को न था। विवश होकर जाते हुए बोली, 'बड़े बेदर्द हो। सियासी आदमियों के दिल नहीं होता, यह मैं समझ गई।'

रशीदा चली गई।

आग़ामीर सिर हिलाकर बड़बड़ाने लगे, 'इस रोशनुद्दौला के ज़हरीले दाँत तोड़ना ही पड़ेंगे। बेशर्म कहीं का। फिरंगियों से रिश्ता जोड़ रहा है। ग़द्दार !'

वह उठे और धीरे से घर के बाहर हो गए। रास्ते में घोर सन्नाटा था। थोड़ी दूर पर एक पहरेदार खड़ा था।

'क़ासिम !' धीरे से आग़ामीर ने कहा।

'हुज़ूर,' उसने तलवार से अभिवादन किया।

'साथ आने की कोई ज़रूरत नहीं है' कहकर आग़ामीर आगे बढ़ गए।

बेग़म साहबा के महल के निकट काफ़ी लोगों का आना-जाना जारी था। एक को संबोधित करके आग़ामीर ने कहा, 'नासिर खाँ।'

तलवार से अभिवादन करते हुए उस व्यक्ति ने कहा, 'जी हुज़ूर।'

आग़ामीर ने पूछा, 'ख़बर ?'

उसने उत्तर दिया, 'सब ठीक है हुज़ूर !

आग़ामीर आकर महल के सामने खड़े हो गए। नासिरखाँ की कुमुक सारे महल को घेरे हुए थी। एकाएक पैर बढ़ाकर आग़ामीर बेग़म साहबा के महल में घुस गए। पहरेदार ने सलाम करके रास्ता दे दिया।

× × ×

बादशाह वेगम ने कहा, 'मैं सब तरह से कंपनी बहादुर का साथ देने को तैयार हूँ, शर्त यह है कि मालिके-अवध पर कोई आँच न आने पाए।'

रेज़ीडेंट बोला, 'हम इस बात का ख़याल रक्खेगा। हम तो इस आग़ामीर को सज़ा देना चाहता है। इसने सल्तनत को तबाह कर रक्खा है।'

रोशनुद्दौला ने कहा, 'मगर यह काम आसान नहीं है, रेज़ीडेंट साहब! बिना मालिका-आलिया की मदद के कुछ नहीं हो सकता।'

बादशाह वेग़म चुप थीं।

रेज़ीडेंट और रोशनुद्दौला उठ खड़े हुए। बादशाह बेग़म ने कहा, 'मैं अपना काम ज़रूर करूँगी। आप इतमीनान रक्खें।'

रेज़ीडेंट ने जवाब दिया, 'मुझे इतमीनान है वेग़म आलिया। हम फिर मिलेंगे।'

× × ×

'हाथ ऊपर करिए रेज़ीडेंट साहब!'

दोनो ने आश्चर्य के साथ देखा कि मुँह पर नक़ाब डाले दो व्यक्ति पिस्तौल ताने दोनो ओर खड़े हैं।

एक ने धीरे से सीटी बजाई। लगभग एक दर्जन नक़ाबपोश आकर खड़े हो गए। उसी व्यक्ति ने आज्ञा के स्वर में कहा, 'इन दोनो को क़ैदख़ाने ले जाओ। मगर पहले इनकी तलाशी लेकर सामान क़ब्ज़े में करो।'

रेज़ीडेंट और रोशनुद्दौला की तलाशियाँ ली गईं। बरामद हुए पिस्तौल सरदार ने क़ब्ज़े में किए।

'ले जाओ', उसने कड़ककर हुक्म दिया।

नक़ाबपोश दोनो को ले जाने लगे।

'ठहरो,' वेग़म साहबा ने कहा।

सब लोग रुक गए।

बादशाह बेग़म ने सरदार की ओर मुख़ातिब होकर कहा, 'आप कौन हैं ? मेरे महल में आपको आने की जुरअत कैसे हुई ?'

सरदार ने अभिवादन करते हुए कहा, 'बेग़म आलिया, हम हुज़ूर के नौकर हैं। इन ग़द्दारों को, जिन्होंने आपको गुमराह कर रक्खा है, गिरफ़्तार करने आए हैं।'

'मगर तुम हो कौन ?' बादशाह बेग़म ने दृढ़ता के स्वर में कहा।

'मैं हूँ सल्तनते अवध का वज़ीरे आज़म आग़ामीर,' आग़ामीर ने चेहरे से नकाब उलटते हुए कहा।'

बेग़म के मुँह से चीख़ निकलते रह गई।

आग़ामीर के चेहरे पर मुस्किराहट थी।

बादशाह बेग़म ने कहा, 'ये दोनो शख़्स मेरे मेहमान हैं। मैंने इन्हें बात करने के लिए बुलाया था। मैं मलिके-अवध की हैसियत से इन्हें छोड़ देने का हुक्म देती हूँ।'

आग़ामीर ने क्षणभर सोचा और कहा, 'मलिके आलिया की हुक्म की उदूली करना मेरे ताक़त की बात नहीं है। सिपाहियों, इन्हें आज़ाद करो।'

सिपाहियों ने दोनो को छोड़ दिया।

रेज़ीडेंट और रोशनुद्दौला की ओर देखते हुए आग़ामीर ने कहा, 'आप लोग अब जा सकते हैं। मगर यह भूलिएगा नहीं कि मेरा नाम आग़ामीर है। जाइए।'

दोनो चले गए।

आग़ामीर ने बादशाह बेग़म को अभिवादन किया और अपने सैनिकों के साथ चुपचाप महल के बाहर हो गए।

[१७]

और—

इस घटना के दूसरे ही दिन बादशाह बेग़म ने आग़ामीर को अपने महल में रात्रि के समय बुला भेजा।

आग़ामीर इस निमंत्रण को पाकर घबराए भी और आश्चर्यान्वित भी हुए। किंतु बेग़म साहिबा का हुक्म टालना उनके वश की बात न थी।

आग़ामीर को आया जानकर बादशाह बेग़म ने उन्हें बड़ी इज़्ज़त के साथ बिठाया। वह बोलीं, 'आज तमाम लखनऊ में तुम्हारी इज़्ज़त की शोहरत फैली हुई है, आग़ामीर! मैं भी तुम्हारी इज़्ज़त करती हूँ।'

आग़ामीर आदाब बजा लाये और बोले, 'मुझ नाचीज़ को जो इज़्ज़त आपने बख़्शी है, वह काबिले फ़ख़्र है मेरे लिये, हुक्म कीजिये!'

बादशाह बेग़म ने कहा, 'कल तुमने मुझे बचा लिया आग़ामीर। मैं न जानती थी कि ये दोनो इतने बड़े ग़द्दार हैं। मैं यह चाहती थी कि मालिके-अवध के सामने इस हादसे का कोई ज़िक्र न हो।

सिर झुकाकर आग़ामीर ने कहा, 'मलिके आलिया का हुक्म ज़ुरूर माना जायगा।'

प्रसन्न होकर बेग़म बोलीं, 'आज मैंने समझा कि तुम सचमुच सल्तनते अवध के वज़ीरे आज़म होने के लायक़ हो।'

आग़ामीर ने सिर झुका दिया।

एक सुंदर-सा सोने का डिब्बा आग़ामीर की ओर बढ़ाते हुए बादशाह बेग़म ने कहा, 'अवध की ख़िदमतों का यह सिला है तुम्हारे लिये, आग़ामीर! मैं वज़ीरे आज़म के लिये अपने खर्च से एक कोठी बनवाना चाहती हूँ। इन जवाहरातों को बेचकर तुम अपने लिये लखनऊ में एक शानदार कोठी बनवालो।'

आग़ामीर कुछ असमंजस में पड़ गए। उन्हें आगा-पीछा करते देखकर बेग़म साहबा बोल उठीं, 'यह मेरा हुक्म है आग़ामीर। गंगा की नहर तैयार होने से पहले ही यह कोठी बन जाना चाहिए। सल्तनते अवध का वज़ीर मामूली कोठी में नहीं रह सकता। उम्मीद है कि तुम्हें मेरा हुक्म मानने में किसी तरह का इंकार न होगा।'

सिर झुकाकर आग़ामीर ने कहा, 'मलिके आलिया के हुक्म से कौन इंकार करने की ताक़त रखता है!'

प्रसन्न होकर बेग़म साहबा ने कहा, 'मैं तुमसे बहुत खुश हूँ, आग़ामीर! मैंने पहले तुम्हें जाना-समझा न था। तुम वाक़ई शाने अवध हो।'

आग़ामीर ने हाथ बढ़ाकर जवाहिरातों का डिब्बा ले लिया।

बेग़म साहबा ने बाँदी को बुला कर कहा, 'वज़ीरे आज़म को बाइज़्ज़त महल के बाहर पहुँचा दो। खबरदार, यह ख़बर किसी को मालूम न हो।'

आग़ामीर महल के बाहर पहुँचा दिए गए।

उनके पतन का इस प्रकार सूत्रपात हो गया था।

× × ×

गंगा की नहर की खुदाई का काम ज़ोरों पर चल रहा था। आग़ामीर की योजना कार्यान्वित होने लगी। लाखों रुपए पानी की तरह बहने लगे।

उधर शान के साथ आग़ामीर की कोठी भी बनने लगी। बेग़म साहबा के दिए हुए जवाहरात लाखों रुपए के थे। आग़ामीर ने थोड़े से जवाहरात एक जौहरी के हाथ बेच दिए तथा आलीशान कोठी बनवाने लगे।

आग़ामीर के शत्रुओं के हृदय पर साँप लोटने लगे। उनके विरोधी घूम-घूमकर उनके विरुद्ध विष उगलने लगे। उन्होंने उनके विरुद्ध इस

बात का प्रचार करना प्रारंभ किया कि नहर की खुदाई की स्वीकृत धन से ही आग़ामीर की कोठी बन रही है। नवाब साहब लौट आए थे। उनके कानों तक भी यह ख़बर पहुँचा दी गई।

अवसर पाकर एक दिन बादशाह बेग़म ने नवाब साहब से कहा, 'सुना है आग़ामीर की कोठी बड़ी शानदार बन रही है। यह भी सुना है कि ड्योढ़ी पर जवाहरात जड़े जाएंगे?'

नवाब साहब 'हूँ' कहकर चुप हो गए।

थोड़ी देर चुप रहकर बादशाह बेग़म ने कहा, 'आग़ामीर सल्तनते अवध के वज़ीरे आज़म हैं। उनके लिये तो लखनऊ में एक शानदार कोठी होना ही चाहिए।'

नवाब साहब चुप हो गए।

बादशाह बेग़म ने फिर कहा, 'लोग तो किसी की तरक़्क़ी बरदाश्त नहीं कर सकते। आग़ामीर के ख़िलाफ़ भी बेबुनियाद बातें करते फिरते हैं। ऐसे लोगों को सज़ा मिलनी चाहिए।'

नवाब साहब इस विषय पर बात न करना चाहते थे। बोले, 'आग़ामीर बहुत बड़ी हस्ती है। लोग उनसे जलते हैं। मैं सब समझता हूँ। वह इस वक्त फ़र्रुख़ाबाद गए हैं। लौटने पर उनसे बात करूँगा।'

बादशाह बेग़म ने कहा, 'मैं आग़ामीर की बड़ी इज़्ज़त करती हूँ। उन्होंने अवध की तरक़्क़ी की है। सुना है, फिरंगी उनसे बहुत नाराज़ हैं।'

नवाब साहब स्फुट-स्वर में बोले, 'मैं फिरंगियों की परवाह नहीं करता। मैं जानता हूँ कि मेरी बदइंतज़ामी से अवध की सल्तनत जा रही थी, लेकिन आग़ामीर ने उसे कई पीढ़ियों तक के लिये बचा लिया। मैं उनका शुक्रगुज़ार हूँ।'

बेगम पति के मुँह की ओर देखने लगीं। नवाब साहब कहते गए, 'सारी अवध की सल्तनत पर आग़ामीर का एहसान है। इस मुल्क की तवारीख में उनका नाम सोने की तरह जगमगाएगा। मैं जानता हूँ कि लखनऊ में उनके दुश्मनों की कमी नहीं है। वे उन्हें किसी-न-किसी जाल में फाँस देना चाहते हैं। मैं उन्हें महफूज रखने की भरपूर कोशिश करूँगा। अगर किसी ने उन्हें क़त्ल भी कर दिया, तो भी लखनऊ की तवारीख़ में वह हमेशा ज़िंदा रहेंगे।'

बेगम चुप रह गईं। नवाब साहब ने कहा, 'फिर भी मैं जाँच करूँगा। अगर किसी ने जुर्म किया है, तो उसे ज़रूर सज़ा मिलेगी, चाहे वह खुद आग़ामीर ही क्यों न हों। अवध का इंसाफ़ किसी को बख्श नहीं सकता।'

बेगम ने राहत की साँस ली। उन्होंने कहा, 'सुना है, नहर काफ़ी लंबी खुद चुकी है। अभी कितने दिन और लग जाएंगे?'

नवाब साहब बोलें, 'अभी कुछ कहा नहीं जा सकता। इस तरह के बड़े कामों में तो देर लग ही जाती है।'

बेगम पूछ बैठीं, 'फिरंगियों का इस बारे में क्या रुख है? वे शायद इस काम को पसंद न करते हों?'

नवाब साहब को फिरंगियों के नाम से इन दिनों नफ़रत थी। बोले 'फिरंगी कौन होते हैं इस काम में दखल देनेवाले? हम चाहे जो कुछ करें।'

अब बेगम चुप हो गईं। नवाब साहब ने कहा, 'इस वक्त आग़ामीर की कोठी का बनना सचमुच मुझे ताअज्जुब में डाल रहा है। मैंने कई बार उनसे कोठी बनवाने के लिये कहा, मगर उन्होंने हमेशा इनकार ही किया है। अब वह बिना मुझे इत्तिला दिए ही मनमानी कोठी बनवाने लगे हैं। यह बात मुझे थोड़ा परेशान ज़रूर करती है।'

बेग़म बोल उठीं, 'मगर आपको आग़ामीर की ईमानदारी पर शक न करना चाहिए। आग़ामीर सल्तनत के सच्चे ख़ादिमों में से हैं।'

'हूँ' कहकर नवाब साहब चुप हो गए।

बेग़म ने कहा, 'राजा दर्शनसिंह'—

और वे सहसा चुप हो गईं।

नवाब साहब आराम के समय राज-संबधी बातें करना कम पसंद करते थे।

वह सोने लगे।

[१८]

अवध के पोलिटिकल एजेंट के पास गवर्नर जनरल का पत्र हाल ही में आया था कि अवध को अँगरेज़ी राज्य में क्यों नहीं मिला लिया जाता। हमको लखनऊ की गड़बड़ी, वज़ीरों की नमकहरामी और नवाब की ऐयाशी से लाभ उठाना चाहिए। नवाब को गद्दी से हटा कर पेंशन दे दो तथा अवध को अँगरेज़ी राज्य में मिला दो।

पोलिटिकल एजेंट ने उत्तर में लिखा। 'इस वक़्त मौक़ा टल गया है। हमने वज़ीरों को मिला कर लखनऊ में अच्छी-ख़ासी गड़बड़ी पैदा कर दी थी। नवाब साहब घबरा उठे थे। बड़ा अच्छा मौक़ा हाथ आ गया था। हिंदू-मुस्लिम वैमनस्य ने भी उग्र रूप धारण कर लिया था। लेकिन जीती हुई बाज़ी हम हार गए। आग़ामीर-नामक एक व्यक्ति ने सारा खेल बिगाड़ दिया। वह हम लोगों की सारी चालें समझता है। वह अँगरेज़ों से नफ़रत करता है। महल के अंदर रहने वाली रशीदा बानो नामक एक स्त्री उसकी सहायता करती है। इसी आग़ामीर को नवाब साहब ने अवध का वज़ीरे आज़म बना दिया है। अब अवध को अँगरेज़ी राज्य में मिला देने की बात पचासों वर्ष पीछे चली गई है। हम लोग इस आग़ामीर को बरबाद करने की कोशिश में लगे हुए हैं।'

गवर्नर जनरल को, यह पत्र पाकर, बड़ी निराशा हुई। असंतुष्ट होकर उसने पोलिटिकल एजेंट को हटाकर नया एजेंट भेज दिया। नए रेज़ीडेंट का लखनऊ में कोई विशेष परिचय न था। फिरंगियों की चालें असफल होकर रह गईं।

× × ×

मीर और मिर्ज़ा की शायरी का मर्ज़ बढ़ रहा था। अपनी शायरी द्वारा एक दूसरे को नीचा दिखाने की चेष्टा में लगे रहते थे।

संध्या का समय था। मीर साहब फेंटे में कलम खोंसे, हाथ में कागज़ और कलम लिए गोमती की तरफ़ कदम बढ़ाए चले जा रहे थे। आजकल नवाब साहब की मुसाहबी से मीर और मिर्ज़ा दोनो को छुट्टी मिली हुई है। इसीलिये दोनो रोज़ शाम को गोमती के किनारे पहुंच जाते हैं और घंटों शायरी लिखा करते हैं। एक दूसरे को सुनाते, बहस करते और झगड़ते हैं। लाख चेष्टा करने पर भी कोई किसी पर पूरी तरह से विजय प्राप्त नहीं कर पाता।

मीर झपटते हुए गोमती-तट पर पहुंच गए। मिर्ज़ा साहब वहां पहले ही पहुंच गए थे, तथा एक दरी पर बैठे झूम-झूम कर शेरें लिख रहे थे। मीर को देखकर मिर्ज़ा बोले 'अम्यां, बड़ी देर कर दी आज। क्या बेगम का पायजामा सीने लगे थे?'

मीर साहब की भवें तन गईं। बोले, 'बेगम का पायजामा धोते होंगे आप। यहां तो तीन पुश्तों से सिर्फ शायरी करते आए हैं। शेर अर्ज़ है:—

मीर की मजलिस में हरदम शायरी की धूम है;
हर लफ़्ज उस शायरी का दर्द में दीवाना है।

मिर्ज़ा साहब मुंह बनाकर बोले, 'अम्यां! यह कोई शेर है। शेर अर्ज़ है:—

कब्र जाना पै हो गया पागल;
खोद डाला मज़ार ठोकर से।'

मीर साहब हँसते-हँसते दोहरे हो गए। बोले, 'अम्याँ वाह, मिर्ज़ा साहब ! आप शायरी करते हैं या फौजदारी ? क्या लचर शेर कहा आपने ? आप शेर कहते हैं या भाड़ में चने भूँजते हैं।'

मिर्ज़ा साहब क्रोध में बाहें चढ़ाते हुए बोले, 'जरा ज़ुबान सँभालकर बात कीजिए, मीर साहब ! भड़भूजे होंगे आप। हम तो शायर हैं, शायर।'

मीर साहब ताव खाकर बोले, 'आप तो ख्वामखा लाल-पीले हुए जा रहे हैं। मैंने आपको कहा ही क्या है ?'

मिर्ज़ा बोले, 'साफ़-साफ़ तो भड़भूजा कह रहे हैं और क्या कहेंगे। शेर अर्ज़ है :—

मरने की ख़बर आई तो, बोला वो नामदार-
आशिक मिजाज़ था, तभी कुछ खा के सो गया।'

मीर गंभीर होकर बोले, 'अम्याँ मिर्जा साहब !'

मिर्ज़ा ने उसी लहज़े में कहा, 'फरमाइए मीर साहब' !

'मीर ने कहा, 'कह दूँ ?'

मिर्ज़ा ने कहा, 'कहिए न।'

मीर फिर बोले, 'बुरा तो न मानिएगा ?'

मिर्जा खीझकर बोले, 'बुरा मानने की क्या बात है। आप फरमाइए न।'

मीर साहब ने कहा, 'आप यह पेशा ही छोड़ दीजिए।'

मिर्ज़ा कुछ बिगड़कर बोले, 'क्या कहा आपने ?'

मीर कहने लगे, 'दरअसल आपको शायरी करना आ ही नहीं सकता।'

मिर्ज़ा का चेहरा क्रोध से लाल हो गया। वह आस्तीनें सँभालते हुए बोले, 'ज़रा होश में आकर बातें करो मीर, आपने मुझे समझ क्या लिया है। मुझे यह बदतमीज़ी बरदाश्त नहीं।'

क्रोध में खड़े होकर मीर ने कहा, 'बदतमीज़ होंगे आप। आप लखनऊ में रहने के क़ाबिल नहीं।'

मिर्ज़ा भी क्रोध में आकर खड़े हो गए और चिल्लाकर बोले, 'क़लम पकड़ने की तमीज़ नहीं और शायर बनने चले हैं। घर में नहीं दाने, अम्मा चलीं भुनाने।'

मीर बोले 'दाने आप के घर में न होंगे। यहाँ तो रोज़ माल कटते हैं, माल। बाप-दादे भीख माँगते हुए लखनऊ आए होंगे और आप बन गए शायर।'

मिर्ज़ा को बरदाश्त न हुआ। बोले, 'भीख तुम्हारे बाप-दादे माँगते होंगे। यहाँ तो हमेशा दूसरों को रुपया लुटाते आए हैं।'

मीर ने कहा, 'गधे को गुलकंद और गँवार को पापड़। शायरी छोड़कर चौक की मंडी में घुइयाँ बेचो जाके, मिर्ज़ा।'

मिर्ज़ा झपटते हुए बोले, 'कुँजड़ा तू होगा और तेरा बाप। बदतमीज़!'

दोनो गुँथ गए। मीर ने कसकर पटकनी दी, तो मिर्ज़ा चारों खाने चित्त। लपककर मिर्ज़ा ने मीर की टाँग पकड़ ली। मीर भड़भड़ा कर पत्थरों पर गिरे। सर फट गया। खून की धारा बहने लगी।

'शैतान, तुझे आज कत्ल करके ही दम लूँगा,' कहकर मीर ने जेब से छोटा-सा चाकू निकाला और मिर्ज़ा की पसलियों में घुसेड़ दिया। पास में ही एक बड़ा-सा पत्थर पड़ा था। गिरते-गिरते मिर्ज़ा ने वह पत्थर मीर के सिर पर दे मारा।

दोनो गोमती के किनारे दम तोड़ रहे थे। मीर ने कराह कर कहा,

'अम्यां मिर्ज़ा! यह बहुत बुरा हुआ। आखिर हमारी तुम्हारी-दुश्मनी ही क्या थी?'

मिर्ज़ा में बोलने का दम न था। फिर भी साहस बटोरकर बोले, 'तुम ठीक कह रहे हो भाई मीर! शेर भी अर्ज़ है—'

मिर्ज़ा की देह निष्प्राण हो गई।

मीर ने धीरे से कहा, 'अम्याँ! यह भी कोई शेर है? यह है—'

और मीर भी पंच-तत्त्व को प्राप्त हो गए।

लखनऊ के दो प्रसिद्ध शायरों के अभियान में गोमती-तट का अंधकार अटूट हास कर रहा था।

[१८]

बादशाह बेगम के महल से जवाहरातों की चोरी का समाचार लखनऊ में बिजली की तरह फैल गया।

चिराग़-तले यह अँधेरा?

आखिर बेगम के महल से जवाहरात चुराने का साहस किसने किया?

चारों ओर तलाशियों की धूम मच गई। पर न जवाहरात कहीं मिलना थे और न मिले ही। कई लाख के जवाहरात आखिर चुरा कर कौन पचा जायगा।

नवाब साहब बिगड़कर कर्मचारियों से बोले, 'तब क्या जवाहरातों को ज़मीन खा गई? तुम लोग फौरन् पता लगाओ, नहीं तो न जाने कितनों को मौत के घाट उतरना पड़ेगा।'

कर्मचारियों ने सारे शहर में तलाशियों की धूम मचा दी। शहर के सराफ़ों और जौहरियों की भी शहर कोतवाल ने तलाशी ली।

अंत में नत्थामल जौहरी के यहाँ काफ़ी जवाहरात बरामद हो गए।

नत्थामल गिरफतार कर लिए गए।

बेग़म मुस्किरा उठीं।

नवाब साहब आश्चर्यान्वित होकर बोले, 'नत्थामल जौहरी के पास से जवाहरातों का बरामद होना एक ताअज्जुब की बात है। आखिर वहाँ जवाहरात कहाँ से आ गए ?'

बेग़म गंभीर चेहरा बनाकर बोलीं, 'उसी चोर ने इन जवाहरातों को जौहरी के हाथ बेचा होगा। यह पता तो जौहरी से चल ही जायगा।'

'हूँ' कहकर नवाब साहब चुप हो गए। वह आग़ामीर के आने की रास्ता देख रहे थे।

अंत में एक दिन जौहरी को लाकर नवाब साहब के सामने पेश किया गया।

नवाब साहब ने पूछा, 'आपको ये जवाहरात कहाँ से मिले।'

जौहरी भय से काँप रहा था।

देर होते देखकर नवाब साहब ने कड़ककर कहा, 'मेरे हुक्म की फौरन् तामील हो।'

जौहरी ने लड़खड़ाती ज़ुबान से कहा, 'खता मुआफ़ हो ! मैंने ये जवाहरात वज़ीर आज़म से खरीदे हैं। मेरे साथ न्याय हो।'

आश्चर्य से आँखें फाड़ते हुए नवाब साहब ने कहा, 'क्या कहा ? क्या आग़ामीर से ?'

जौहरी ने कहा, 'जी जहाँपनाह ! वज़ीरे आज़म को कोठी बनवाने के लिये रुपयों की सख्त ज़ुरूरत थी।'

नवाव साहब बोले, 'अगर बात झूठ निकली, तो तुम्हारा सर कलम कर दिया जायगा।'

हाथ जोड़ता हुआ जौहरी बोला, 'मैं सच ही कह रहा हूँ जहाँपनाह! मैं बेकुसूर हूँ।'

'हूँ' कहकर नवाब साहब चुप हो गए।

जौहरी को हवालात में बंद कर दिया गया। आग़ामीर के घर की तलाशी का फरमान जारी कर दिया गया। उनके घर से बाक़ी जवाहरात भी बरामद हो गए।

× × ×

अश्रु-पूर्ण नेत्रों से रशीदा ने कहा, 'मैं सब कुछ सच ही बयान कर रही हूँ जहाँपनाह से। मैं उस रात को खुद छिपकर सब कुछ देख रही थी।'

कुछ सोचकर नवाब साहब ने कहा, 'लेकिन अब कोई चारा नहीं है, रशीदा! बेग़म आग़ामीर को पसंद नहीं करतीं, फिर उन्होंने इतने कीमती जवाहरात कैसे दे दिए।'

रशीदा बोली, 'खता मुआफ हो, उन्हें फँसाने के लिये—'

नवाब साहब बोल उठे, 'शायद तुम ठीक ही कह रही हो, मगर बेग़म आलिया की बात पर यक़ीन करना ही पड़ेगा। अब तो यह ख़बर सारे लखनऊ में फैल चुकी है।

रशीदा चुप रही।'

नवाब साहब कहने लगे, 'मैं सब कुछ समझता हूँ रशीदा, मगर मजबूर हूँ।'

और वह एक लम्बी साँस लेकर चुप रह गए। रशीदा उनके मुँह की ओर देख रही थी।

नवाब साहब कहने लगे, 'आग़ामीर ने जो कुछ सल्तनते अवध के

लिये किया है, वह सब मैं खुद समझता हूँ, मगर फिर भी उन्हें सज़ा तो देना ही होगी।'

'आग़ामीर को सज़ा ?' रशीदा के मुँह से निकला।

'हाँ, और चारा ही क्या है ?' नवाब साहब के मुँह से धीरे से निकला।

रशीदा कुछ घृणा-पूर्ण दृष्टि से नवाब साहब की ओर देखने लगी। आग़ामीर ने इस शख़्श के लिये क्या नहीं किया।

रशीदा उठकर जाने लगी। नवाब साहब उसे रुकने का इशारा करके अंदर चले गए तथा थोड़ी देर में ही बाहर आ गए। उनके हाथ में एक थैली थी।

रशीदा की ओर उसे बढ़ाते हुए नवाब साहब ने कहा, 'मैं आग़ामीर के एहसानों का बदला कभी नहीं चुका सकता, रशीदा ! सारी सल्तनत उनके एहसान से दबी हुई है। मगर सियासत बहुत बुरी चीज़ है। इसमें आदमी ऊपर ज़रूर उठता है, लेकिन उसका ज़वाल भी होता है। लो, आग़ामीर से कह देना कि इससे ज़्यादा उनका दोस्त गाज़ीउद्दीन हैदर इस वक्त कुछ नहीं कर सकता।'

कहते-कहते नवाब साहब का गला भर आया। अभी थोड़ी देर पहले रशीदा के हृदय में नवाब साहब के प्रति जो घृणा के भाव पैदा हो गए थे, उन्हें इन शब्दों ने धो दिया।

वह बोली, 'मगर—'

नवाब साहब बोल उठे, 'अभी और कुछ मैं नहीं कर सकता रशीदा ! अब तुम जा सकती हो।'

रशीदा समझ गई कि इस समय नवाब साहब अत्यंत दुखी हैं और एकांत चाहते हैं।

[२०]

फर्रुखाबाद से लौटते ही आग़ामीर को नवाब साहब के सामने पेश होना पड़ा। आग़ामीर आते ही सब कुछ सुन चुके थे।

आग़ामीर सिर झुकाए खड़े थे।

नवाब साहब ने भरे कंठ से कहा, 'तुमने अपनी ज़रा-सी ग़लती से मेरी सारी उम्मीदों पर पानी फेर दिया, आग़ामीर !'

आग़ामीर ने संयत शब्दों में कहा, 'लेकिन मैं बेगुनाह हूँ, मालिके जहाँ ! मेरे खिलाफ साज़िश की गई है।'

नवाब साहब के नेत्र अश्रु-पूर्ण थे। वह बोले, 'मैं सब कुछ समझता हूँ, आग़ामीर, लेकिन मैं मजबूर हूँ। तवारीख मुझे एहसान फरामोश कहेगी, लेकिन मुझे वह सब कुछ बनना ही पड़ेगा। उम्मीद है-तुम मुझे मुआफ़ करोगे।'

आग़ामीर नवाब साहब की कमज़ोरी समझ गए थे।

अपने को सँभाल कर नवाब साहब ने कहा, 'मैं बादशाह बेग़म के जवाहरातों की चोरी के सिलसिले में सज़ा देता हूँ, आग़ामीर ! तुम्हें वज़ीरे आज़म के ओहदे से बरखास्त किया जाता है। तुम्हें दो दिन के अंदर लखनऊ छोड़कर कानपुर चले जाना पड़ेगा।'

आग़ामीर को देश निकाला दे दिया गया। नवाब साहब ने उन्हें लखनऊ छोड़कर कानपुर चले जाने को आज्ञा दी।

कानपुर जाने से पहले वह आखिरी बार रशीदा से भेंट करने गए। इधर दो दिन से रोते-रोते रशीदा की आँखें सूज गई थीं।

आग़ामीर ने फीकी मुस्कान के साथ कहा, 'रशीदा, मैं अलविदा के लिये आया हूँ।'

गंभीर होकर रशीदा ने कहा, 'आखिर बेगम की साज़िश कामयाब

होकर ही रही ! सचमुच औरत क्या नहीं कर सकती। अपनी इस भूल के लिये—'

आगामीर बीच ही में बोल उठे, 'हटाओ, छोड़ो भी अब इन बातों को रशीदा ! आज मैं अपने को बहुत ही हलका महसूस कर रहा हूँ। ये सियासी दांव-पेंच हैं। इनके फंदों में सभी को फँसना पड़ता है। अच्छा तो फिर—'

नवाब साहब द्वारा दी गई थैली आगामीर को देते हुए रशीदा ने कहा, 'इसे नवाब साहब ने आपको एक दोस्त की हैसियत से दिया है। उम्मीद है कि, आप इसे कुबूल करेंगे।'

थैली में लाखों रुपए के जवाहरात भरे हुए थे। उन्हें देखकर मुस्किराते हुए आगामीर ने कहा, 'इतने हीरे-पन्ने देकर नवाब साहब ने मेरा बेशकीमती हीरा मुझसे छीन लिया है।'

आगामीर का इशारा समझकर रशीदा ने सिर झुकाकर कहा, 'इसमें नवाब साहब का कुसूर ही क्या है। खुद तुम्हीं ने तो उस हीरे को—'

अत्यंत प्रसन्न होकर आगामीर ने कहा, 'क्या सच कह रही हो रशीदा। क्या मैं—'

रशीदा ने आगामीर के वक्षःस्थल में अपना सिर छिपा लिया।

कानपुर पहुँच कर आगामीर ने रशीदा से विवाह कर लिया। रशीदा का नाम बदल कर खुर्द महल बेगम हो गया।

आगामीर बहुत दिन तक जीवित रहे। उन्होंने कानपुर में एक शानदार कोठी बनवा ली थी। उस कोठी को लोग खुर्दमहल कह कर पुकारते थे। खुर्द महल कानपुर की एक विशिष्ट इमारतों में से थी। उसके ध्वंसावशेषों पर ही आज तिलक हाल बना हुआ है। तिलक

हाल के सामने एक पार्क बना हुआ है, जिसे अब श्रद्धानंद पार्क कहकर पुकारते हैं। आग़ामीर के वंशज अब भी कानपुर में मौजूद हैं।

और वह अधबनी नहर आज भी लखनऊ के हृदय को चीरकर पड़ी हुई आग़ामीर की स्मृति में चार आँसू बहाती रहती है। आग़ामीर की वह कोठी भी ध्वंसावशेष के रूप में अकड़ी खड़ी हुई है। उसे लोग आग़ामीर की ड्योढ़ी कहते हैं।

लखनऊ का इतिहास बतलाता है कि नवाब गाज़ीउद्दीन हैदर के शासन-काल में फिर कभी अँगरेजों ने अवध को अँगरेजी राज्य में मिलाने का षड्यंत्र नहीं किया। अवध का अंतिम नवाब तो वाजिद अली शाह हुआ।

कथा के अंत में

वर्षा जारी थी। नाले ने अपनी कथा समाप्त करते हुए कहा, 'यह है मानव-योजना की असफलता का एक इतिहास। प्रकृति से मेरा कोई संबंध नहीं।'

मैंने कहा, 'मैं तुम्हारे दर्द को पहचान गया। अच्छा, चलो।'

वर्षा रुक गई थी। नाले की गर्जना भी कम हो गई थी।

मुझे चौक जाना था। सवारी के लिये इधर-उधर दृष्टि दौड़ाई।

दूर पर एक इक्केवाला आवाज़ लगा रहा था, 'एक सवारी, आगामीर की ड्योढ़ी।'

हमारे नवीन आकर्षण

उपन्यास :

नया युग नया मानव :	मोहनलाल महतो वियोगी	५.००

कहानी-संग्रह :

चिता के फूल :	रामवृक्ष बेनीपुरी	३.००

काव्य :

मेघदूत	नागार्जुन	३.००
बैठो मेरे पास* :	केदारनाथ मिश्र 'प्रभात'	३.००
पंछी :	गोपालसिंह नेपाली	१.००

नाटक :

सिराजुद्दौला*	सर्वदानंद वर्मा	२.००

चरित्र निर्माण:—पुरुषार्थ के बोलते चित्र : हिमांशु श्रीवास्तव ३.२५

समालोचना:—साहित्यिक समीक्षा: केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' २.५०

छायावाद रहस्यवाद का रहस्य : धर्मेंद्र ब्रह्मचारी २.५०

पुस्तकालय विज्ञान :

गाँव का पुस्तकालय	अनुज शास्त्री	१.२५
पुस्तकालय-आँदोलन	,,	१.२५
वर्गीकरण-सूचीकरण	,,	१.२५

बालोपयोगी :

बच्चों के बापू :	ज्योतिलाल भार्गव	२.००
मनुष्य का विकास :	,,	१.५०
जब हम बच्चे थे :	,,	१.२५

* उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत